

आर्य जगत्

ओ३म्

कृण्वन्तो

विश्वमार्यम्

रविवार, 05 नवम्बर 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 05 नवम्बर 2017 से 11 नवम्बर 2017

मार्गशीर्ष कृ.- 02 • वि० सं०-2074 • वर्ष 58, अंक 95, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 • सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,117 • पृ.सं. 1-12 • इस अंक का मूल्य - 2.00 रुपये

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब द्वारा अमृतसर में आयोजित हुआ आनन्द पर्व

“ओ३म् ही आदि, मध्य एवं अंत है” कहा-डा. पूनम सूरी ने

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब के तत्वावधान में आयोजित आनन्द पर्व के भव्य समारोह का आयोजन ऊर्वी सभागार, बी.बी.के.डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर एवं डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, अमृतसर में किया गया। इस अवसर पर डा. पूनम सूरी मुख्य अतिथि के रूप में और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मणि सूरी विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित हुए। आयोजन की अध्यक्षता प्रिंसिपल जे.पी. शूर, प्रधान, उपसभा, पंजाब ने की।

कार्यक्रम का शुभारम्भ बी.बी.के.डी.ए.वी. कॉलेज के प्रांगण में वैदिक यज्ञ से हुआ। वैदिक मंत्रोच्चारण की ध्वनि एवं हवन सामग्री की सुगंध से समस्त वातावरण पावनता से परिपूर्ण हो गया। इस यज्ञ में प्रादेशिक सभा एवं डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति के पदाधिकारियों सहित भारी संख्या में उपस्थित प्राचार्यों,



के इस महान आयोजन की भूमिका स्पष्ट की। श्री जे.पी. शूर ने बच्चों की सुरक्षा की तरफ सभा का ध्यान आकर्षित किया और कहा कि आज हमारे समाज में हमारे बच्चे कहीं भी सुरक्षित नहीं हैं। वे समय-समय पर यौन शोषण का शिकार होते रहते हैं। इसीलिए

एक दृश्य-श्रव्य प्रस्तुति द्वारा स्वामी जी का सम्पूर्ण जीवन दर्शाया गया। विद्यार्थियों की प्रस्तुति अत्यंत भावपूर्ण एवं हृदय स्पर्शी थी। उपस्थिति ने इस भावपूर्ण प्रस्तुति के लिए तालियों की गड़गड़ाहट से सभागार को गूँजा दिया।

की शुद्धि संभव हो सके। हमें यह शरीर भगवान तक पहुँचने के साधन के रूप में मिला है। उन्होंने कहा कि महात्मा आनन्द स्वामी का त्याग एवं संघर्षमय जीवन हम सब के लिए महान आदर्श तथा प्रेरणा का स्रोत रहा है। शिक्षक-वर्ग को प्रेरणा प्रदान करते हुए उन्होंने कहा कि शिक्षक अपने शिष्यों को समर्पण भाव से पढ़ाएं क्योंकि शिक्षक ही विद्यार्थी का सच्चा मार्गदर्शक होता है। परिश्रम की महत्ता की ओर संकेत करते हुए उन्होंने शिक्षकों को कर्मठ बनने के लिए संदेश दिया। अंत में उन्होंने सभी को सदा प्रसन्न रहने का संदेश दिया।

स्वामी चैतन्य मुनि ने अपने आध्यात्मिक संदेश में सभी को आशीर्वाद दिया। डा. नीलम कामरा, मंत्री, उपसभा पंजाब ने सभी आए हुए अतिथियों का आभार व्यक्त किया। इस अवसर पर समाज कल्याण हेतु असहाय वर्ग



अध्यापकों एवं आर्य समाज के सदस्यों ने भाग लिया।

ऊर्वी सभागार में वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ दीप प्रज्ज्वलन से समारोह प्रारम्भ किया गया। अतिथियों का स्वागत करने के बाद डी.ए.वी. इंटरनैशनल के छात्र कलाकारों द्वारा डी.ए.वी. गान प्रस्तुत किया गया। डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल के विद्यार्थियों द्वारा आर्य जनों के स्वागत में सुंदर गीत प्रस्तुत किया गया।

माननीय श्री जे.पी. शूर ने मान्य मुख्य अतिथि का भावपूर्ण शब्दों में स्वागत किया और उपस्थित अतिथिगणों का अभिनंदन किया। उन्होंने अपने उद्बोधन में उपसभा, पंजाब द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में तथा देश और समाज के कल्याण हेतु किए गए विभिन्न कार्यक्रमों का खुलासा किया तथा आनन्दपर्व

समाज की सोच बदलने की आवश्यकता है, और उपसभा पंजाब इस विषय में अत्यंत सक्रिय है।

इस अवसर पर बी.बी.के.डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के संगीत विभाग के श्री विजय महक व छात्राओं ने भजन प्रस्तुत किया। एम.के.डी.डी.ए.वी. स्कूल, अटारी के विद्यार्थियों द्वारा महात्मा आनन्द स्वामी जी के जीवन पर आधारित

मुख्य अतिथि आर्य रत्न डॉ. पूनम सूरी ने आनन्द पर्व के शुभ अवसर पर ऊर्वी सभागार में उपस्थित आर्य जनों को गायत्री महामंत्र और ओ३म् के जाप की महत्ता बताई। उन्होंने ओ३म् को सृष्टि के आदि, मध्य और अंत का आधार बताते हुए कहा कि गायत्री मंत्र को केवल बोल कर नहीं बल्कि हृदय में बिठाने का सतत् प्रयास करना चाहिए ताकि हमारे अन्तःकरण

की महिलाओं को 51 सिलाई मशीनें वितरित की गई।

इस भव्य समारोह में आर्यों का महा जनसैलाब उपस्थित हुआ जिनमें मुख्य रूप से डॉ. रमेश आर्य, श्री एन.के. सूद, श्री आर. एस. शर्मा, श्री एम.एल. शर्मा, श्री एम.एल. सेखरी, स्वामी चैतन्यमुनि, यति सत्याप्रिया, स्वामी सूर्यदेव, स्वामी करुणानन्द,

शेष पृष्ठ 11 पर



स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। - स. प्र. समु. 9

संपादक - पूनम सूरी



● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

शिला भूमिरश्मा पांसुः, सा भूमिः संधृता धृता।

तस्यै हिरण्यवक्षसे, पृथिव्या अकरं नमः॥ अथर्व

ऋषिः अथर्वा। देवता भूमिः। छन्दः अनुष्टुप्।

- (शिला) शिला, (अश्मा) पत्थर, (पांसुः) धूलि [ही] (भूमिः) भूमि [है]। (सा भूमिः) वह भूमि (संधृता) सम्यक् प्रकार धारण की जाकर (धृता) [राष्ट्र के रूप में] धृत हो जाती है। (तस्यै) उस (हिरण्यवक्षसे) हिरण्यवक्षा, सुवर्णगर्भा (पृथिव्यै) भूमि के लिए (नमः अकरं) नमस्कार करता हूँ।

● जिस राष्ट्र-भूमि पर हम अपना तन-मन धन बलिदान करने को तैयार रहते हैं, जिसके गौरव-गीत गाते हम नहीं थकते, जिसकी निन्दा सुन हमारा चेहरा तमतमा उठता है, और जिसकी प्रशंसा सुन हम आनन्द-विभोर हो जाते हैं, उसका विश्लेषण करके देखें तो वह शिला, पत्थर, धूलि आदि का निर्जीव समूह मात्र है। वह क्या वस्तु है जो उस निर्जीव पृथिवी को सजीव राष्ट्र के रूप में परिणत कर देती है? वह वस्तु है उसके निवासियों का परस्पर संगठित होकर, सबको एक इकाई मानकर, अपने अभ्युदय के लिए उसे संधृत करना। संधृत करने में भूमि के वन, पर्वत, खेत, बाग-बगीचे, मैदान, खनिज की खानें, नदियाँ, समुद्र, सबको सजाना-सँवारना, अधिकाधिक उपयोगी बनाना, उद्योग-धंधों, कल-कारखानों आदि को प्रतिष्ठित एवं विकसित करके उत्पादन बढ़ाना, प्रजा की शिक्षा-दीक्षा, चिकित्सा, सामाजिक उन्नति आदि की व्यवस्था करना सब सम्मिलित है। ऐसा करने पर वह शिला, पत्थर, धूल-मिट्टी का ढेर मात्र निष्प्राण पृथिवी सप्राण राष्ट्र-भूमि के रूप में आवृत्त होने लगती है। तब उसके सम्मान को हम अपना सम्मान और उसके

अपमान को अपने समझने लगते हैं। उसकी एक-एक इंच भूमि की रक्षा को, उसकी चतुर्मुखीन उन्नति को, उसकी कीर्ति-प्रतिष्ठा को अन्य राष्ट्रों में उसे उच्च स्थान दिलाने को हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

भूमि 'हिरण्यवक्षाः' तो पहले से ही है क्योंकि उसके गर्भ में कहीं सुवर्ण-रजत की खानें भरी हैं, कहीं हीरे मोती, रत्न, मणियाँ बिछी हैं, कहीं मूल्यवान् तैल-कूप भरे हैं, कहीं अन्य विविध खनिज द्रव्य विद्यमान हैं। किन्तु अब राष्ट्र-भूमि का रूप धारण करने के पश्चात् तो वह सच्चे अर्थों में हमारे लिए 'हिरण्यवक्षाः' हो गई है, क्योंकि हमारे राष्ट्र द्वारा 'कहाँ कौन-सी सम्पत्ति भू-गर्भ में छिपी पड़ी है' इसका अनुसंधान करके राष्ट्रियस्तर पर उसमें से हिरण्यादि सम्पत्ति को प्रजा के हितार्थ निकाला जाने लगा है।

हे अपने वक्षः स्थलपर हिरण्य-हार से अलंकृत मणिमुक्तारत्नापलंकारधारिणी, सुजला, सुफला, मलयज-शीतला, सदस्य-श्यामला, गौरव-मंडिता, यशस्विनी, मनोमोहिनी, समृद्धिमयी मातृभूमि! तुझे हमारा नमस्कार है, शतशः नमस्कार है।

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत-पान

● महात्मा आनन्द स्वामी



स्वामी जी ने राजा और विरक्त की कथा का उदाहरण देते हुए बताया विरक्त ने राजा से निम्न चार वस्तुएँ मांगी। वह जीवन जिसके साथ मरना न हो, वह प्रसन्नता जिसके साथ रन्ज-गम, कष्ट-क्लेश न हो, वह जवानी जिसके साथ बुढ़ापा न हो, वह सुख जिसके साथ दुःख न हो। राजा ने असमर्थता प्रकट की तो विरक्त ने कहा मैंने इसीलिए प्रभु का दामन पकड़ा है, वह मुझे ये वस्तुएँ देगा।

दूसरी कथा में स्वामी जी ने छः मास के मन्त्रित्वकाल का उदाहरण देते हुए कहा मूर्ख लोग इस मास के मन्त्रित्व को विषय भोगों और अन्य व्यर्थ के आमोद-प्रमोद में व्यतीत कर देते हैं। विचारवान् और समझदार परलोक की सामग्री को इकट्ठा करते जाते हैं। अपने शुभ और पुण्य कर्मों के द्वारा वे वही सामान पाते हैं जो उनके मन्त्रित्वकाल में उनके पास था।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथाएँ

एक मनोहर कथा

भारतवर्ष में एक बहुत धनाढ्य बनिया रहता था। दिन-रात उसे अधिक-से-अधिक धन-संग्रह करने की इच्छा रहती थी। इस धन को इकट्ठा करने में वह इतना बुद्धिमान् था कि एक कौड़ी भी कहीं इधर से उधर न जाने देता था। क्या शक्ति कोई साधु, संन्यासी, या निर्धन इसके घर से कुछ ले-जाए।

एक बार बड़ा कौतुक हुआ। एक कंगाल, लूला-लंगड़ा और बूढ़ा बनिये की स्त्री से जो धर्मात्मा और ईश्वर-भक्त थी, थोड़े से चावल ले गया। बनिये को किसी प्रकार पता चल गया। वह दौड़ा-दौड़ा घर से निकला। बूढ़ा आगे निकल गया था। बनिया इसके पीछे लपका और अन्ततः उसे जा ही पकड़ा। पकड़ते ही उसे गालियाँ दीं और कहा- "अरे! तू मेरे घर से यह क्या लिए जाता है। ला, कहीं का उच्चक्का स्त्री को उगकर चला है।" यह कहकर चावल वापस ले लिए और घर में पहुँचकर अपनी स्त्री को भी दो-चार सुनाई और चावल भण्डार में डाल दिए।

ऐसी ही मनोरञ्जक घटनाएँ प्रायः हो जाती थीं। बनिये की स्त्री उसे बार-बार समझाती थी कि देखिए स्वामिन्! यह धन साथ जाने वाला नहीं है। इसका अच्छा प्रयोग करो, जिससे परलोक में काम आए। कभी भूले से मुँह से 'ओम्' का नाम ही ले लिया करो, परन्तु बनिये पर इसका कुछ प्रभाव नहीं होता था और दिन-रात पैसे पर पैसा, दुवन्नरी पर दुवन्नरी, रुपए पर रुपया, गिन्नी पर गिन्नी, थैली पर थैली और सन्दूक पर सन्दूक रखने में व्यस्त रहता था।

स्त्री ने फिर समझाना आरम्भ किया- 'स्वामिन्! यह मनुष्य शरीर विषम-भोग के लिए नहीं है, अपितु ईश्वरभक्ति करने के लिए है। आप यदि दान नहीं करते तो दो घड़ी भक्ति ही किया करें।' यह सुनकर

(क्योंकि इसमें पैसा खर्च नहीं होता था) बनिये ने कहा- 'हाँ! हाँ!! अच्छी बात है, परन्तु अभी जल्दी क्या है? ईश्वर जपन भी कर लिया जाएगा।'

समय इसी प्रकार व्यतीत होता गया। बनिये को कभी ईश्वरभक्ति का समय नहीं मिला। मुकद्माबाजी में, धन-प्राप्त करने में और लोगों से लड़ने-झगड़ने में ही समय व्यतीत होता रहा। सहसा यह धनिक सेठ बीमार हो गया। बनिये ने अपनी स्त्री से कहा- "कोई वैद्य बुलाना चाहिए।" बस, वैद्य बुलाया गया। उसने नुस्खा लिखा। स्त्री ने दवाई मँगवाई और ताक (आले) में रख दी। बनिया प्रतीक्षा करता रहा कि अभी दवाई दी जाती है। प्रातः से सायंकाल हो गया, परन्तु बनिये को दवा नहीं पिलाई गई। अन्ततः बनिये ने स्त्री को आवाज़ लगाई कि दवाई अभी तक क्यों नहीं पिलाई? स्त्री ने कहा- "दवा मँगवाकर रखी हुई है।"

बनिया- "तो फिर देती क्यों नहीं? क्या सोचती है?"

स्त्री- सोचती कुछ नहीं। केवल यही विचार है कि जल्दी क्या पड़ी है। दवाई तो है पिला दी जाएगी। आज न पिलाई तो कल पिला दी जाएगी। कल न पिलाई गई तो परसों दे दी जाएगी। कभी-न-कभी तो दी ही जाएगी।

बनिया- और यदि मैं मर गया तो दवाई क्या काम देगी?

स्त्री- "हाँ, अब मौत याद आई है। जब आपको ईश्वरभक्ति करने के लिए कहती थी तब तो आप कहते थे कि जल्दी क्या पड़ी है, फिर हो जाएगी। यदि आपको मरना याद होता तो ऐसा कभी न कहते। जिस औषधि के लिए प्रतिदिन कहती थी, उसे आपने कभी भी पीने की आवश्यकता नहीं समझी। जो सबसे बड़ी दवाई है, जिससे आत्मा शुद्ध

आर्यसमाज में धार्मिक कर्मकाण्ड

● भद्रसेन

आर्य समाज की स्थापना 1875 में मुम्बई में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने की थी। आर्य और समाज के मेल से आर्यसमाज शब्द बना है। आर्य= क्रियाशील, श्रेष्ठ= अच्छे, पूज्य अर्थ में है। समाज शब्द का सामान्य अर्थ समूह है, पर शास्त्रीय गहरा अर्थ-समझदारों का संगठन है। ऐसा संगठन स्वतः ही नियमित, व्यवस्थित, सभ्य, शिष्ट होता है। अतः आर्यता का प्रचार-प्रसार करना तथा पालना आर्यसमाज का उद्देश्य है। महर्षि ने वेदज्ञान के माध्यम से अज्ञान, अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, अविद्या का निवारण करके तज्जन्य कष्ट-क्लेश-भटकाव को दूर करने का आजीवन प्रयास किया और आर्यसमाज को इस कर्तव्य को निभाने की प्राणपण से प्रेरणा दी।

धार्मिक कर्मकाण्ड की दृष्टि से आर्यसमाज में पंच-महायज्ञों का विधि-विधान है। इन में ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ और बलिवैश्व देवयज्ञ की गणना होती है। ब्रह्मयज्ञ को सन्ध्या भी कहते हैं। जो कि प्रातः तथा सायं सन्धिकाल में किया जाता है। जिस में सम्+ध्या- अर्थात् संसार के बनाने व चलाने वाले का सम्=अच्छी प्रकार से ध्यान, कृतज्ञता ज्ञापन किया जाता

है। इस प्रकार परमात्मा से जुड़ने का प्रयत्न करते हैं।

देवयज्ञ का ही दूसरा नाम अग्निहोत्र है। जिस में अग्नि के माध्यम से सुगन्धित, रोगनाशक जैसे पदार्थों की आहुति देकर जल-वायु आदि को प्रदूषण रहित करते हैं। पितृयज्ञ द्वारा अपने माता-पिता-गुरुजन का आदर-सत्कार, आज्ञापालन तथा सेवा का कर्तव्य किया जाता है। अतिथि यज्ञ-में दूसरों की भलाई करने वाले साधु-सन्तों के सम्मान की बात आती है। पाँचवें यज्ञ में असहायों की सहायता और अन्य प्राणियों का यथाशक्ति ध्यान रखने की बात आती है। आर्यसमाज द्वारा मान्य इन पंचमहायज्ञों में से किसी से भी हिंसा और प्रदूषण किसी प्रकार का नहीं होता है। हाँ, प्रदूषण दूर करने के लिए ही आर्य समाज देवयज्ञ करता है। जैसे छोंक से दाल में परिवर्तन आ जाता है। ऐसे ही देवयज्ञ से जल-वायु आदि में परिवर्तन आता है।

आज के प्रचलित धर्मों में अनेक प्रकार के धार्मिक कर्मकाण्ड किए जाते हैं। उनकी स्थिति सड़कों के बोर्डों की तरह माननी चाहिए। इन से करने-कराने वालों के मन में प्रेरणा उभरती है। इसके साथ हृदय में शुद्धता, ईश्वर से जुड़ने की भावना आती है।

इस कर्मकाण्ड में पूजा-पाठ, व्रत-उपवास, जप-तप, पर्व-यज्ञ-संस्कार आदि गिने जाते हैं।

ब्रह्मयज्ञ- इससे यह स्पष्ट होता है, कि आर्यसमाज ब्रह्मयज्ञ द्वारा एक ईश्वर की ही उपासना करता है। अतः आर्यसमाज की मान्यता के अनुसार इस सारे संसार का एक ईश्वर ही निर्माता और व्यवस्थापक है। जो कि सर्वव्यापक और नित्य है। इसलिए ईश्वर की पूजा-भक्ति-दर्शन के लिए अलग-अलग स्थानों पर तीर्थयात्रा के रूप में जाने की जरूरत नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ईश्वर की उपासना अवश्य करनी चाहिए। ईश्वर के सर्वव्यापक तथा नित्य होने से प्रत्येक चाहने वाला जब भी जहाँ भी चाहे वह पूजा कर सकता है।

देवयज्ञ- देवयज्ञ के ऊपर दर्शाए गए रूप से यह सिद्ध होता है, कि अग्नि, जल आदि प्राकृतिक पदार्थ देव कहलाते हैं। ये साधन मात्र हैं, स्वतन्त्र और चेतन नहीं हैं। इसके साथ आर्यसमाज प्रत्येक प्रकार के स्वच्छता- अभियान को नित्य प्रति करने का पोषक है। तभी तो वेद का संदेश है, कि 'शुद्धाः पूक्ता भवत यज्ञियासः' ऋ. 10. 182 अर्थात् शुद्ध= स्वच्छ, पूत= निर्दोष

होने पर ही कोई यज्ञ का अधिकारी होता है।

पितृयज्ञ- निर्दिष्ट पितृयज्ञ से यह प्रकट होता है, कि हमें अपने सभी सम्बन्धों को पूरी ईमानदारी से निभाना चाहिए। इस बात को धार्मिक कर्तव्य समझकर पारिवारिक जीवन जीना चाहिए।

अतिथियज्ञ- का सन्देश है, कि अपना उपकार किसी प्रकार भी करने वालों का सदा सत्कार तथा सेवा करने को धर्म समझना चाहिए।

बलिवैश्वदेवयज्ञ- यह भावना देता है, कि असहायों की सहायता और निराश्रितों का सहयोग सदा करने का यथाशक्ति प्रयास करें।

इन पाँचों महायज्ञों के सम्बन्ध में जहाँ महर्षि ने 'पंचमहायज्ञविधि' नाम की पृथक् पुस्तक रची, वहीं अपनी सभी रचनाओं में इन की पर्याप्त चर्चा की है। 'यथाशक्ति न हापयेत्' 4.21 मनुस्मृति की इस भावना को सामने रखकर गृहस्थ के लिए ये पाँचों यज्ञ जहाँ आवश्यक बताए हैं, वहाँ संन्यासी के लिए इन का विधान।

182, शालीमार नगर

होशियारपुर, पंजाब

146001

पृष्ठ 02 का शेष

अमृत-पान

और बलवान् होता है, जिसका पान करने से मनुष्य को पशुओं के शरीरों में जाने की आवश्यकता नहीं रहती, उस दवाई के पीने की तो इस जन्म में अत्यन्त आवश्यकता थी। क्या पता अगला जन्म किसी पशुयोनि में हो तो फिर वह महौषधि कैसे पी जा सकती है?"

बनिया- इस दवा से शरीर की रक्षा होती है।

स्त्री- इस दवाई से आत्मा बचता है।

बनिया- इस दवाई से शरीर शक्तिशाली होता है और काम करने की शक्ति आती है।

स्त्री- इस औषधि से शरीर और आत्मा दोनों शक्तिशाली बनते हैं और सब प्रकार के कार्य सिद्ध होते हैं। जिसका आत्मा शुद्ध नहीं, उसका मुख गधों जैसा बन जाता है। जो ईश्वरभक्ति नहीं करता उसके आत्मा को पशुओं के शरीरों में रख दिया जाता है। क्या यह कम दुर्भाग्य है? क्या उन योनियों में आप संसार का कोई काम कर सकते हैं, कुछ सोच सकते हैं, धन-संग्रह कर सकते हैं।

बनिया- "मैं जान गया हूँ प्रिय! आज से ईश्वरभक्ति आरम्भ करता हूँ।"

कितने ही मनुष्य हैं, जो इस धनिक बनिया की भाँति आत्मा से अधिक शरीर का ध्यान करते हैं, उनका आत्मा चाहे निर्बल और भीरु हो, परन्तु वह उसकी ओर ध्यान नहीं देते। हाँ, निर्बल शरीर के लिए टॉनिक=शक्ति देने वाली औषधियों का प्रयोग करते हैं। क्या आत्मा की ओर से असावधान होकर वे सदा रहने वाला सुख प्राप्त कर सकेंगे? कदापि नहीं।

धन पास रखने में सुख है या त्याग करने में दूर की यात्रा थी। मार्ग में जंगल थे, नदियाँ थी, मरुस्थल थे और झीलें थी। ऐसी जान-जोखिम की यात्रा में गुरु और शिष्य पैदल ही चले जा रहे थे। यात्रा आनन्द से कट रही थी कि बातों-बातों में गुरु और चेले के मध्य यह वाद-विवाद छिड़ गया कि धन का त्याग अच्छा है या संग्रह करना।

गुरु अपने लम्बे भाषण में इस बात के तर्क देता था कि त्याग ही अच्छा है। त्याग से ही सुख मिलता है। त्याग ही पार ले जाता है। त्याग से ही परमानन्द मिलता है। धन का संग्रह करना लाख दुखों को इकट्ठा करना है। पहले तो संग्रह करने में परिश्रम करना, दुःख झेलना, बेईमानी करना, सौ छल-कपट करना, फिर इसकी सुरक्षा में जान जाने का

भय, दिन-रात चुराए जाने का भय, न सोने का भय, न भ्रमण करने का आनन्द। यदि चला जाए तो प्राण भी ले जाए। ऐसे धन का संग्रह करने से तो उसका त्याग ही अच्छा है।

शिष्य (चेला) अपने व्याख्यान में इस सिद्धान्त पर बल देता था कि "धन संग्रह करना अत्यन्त लाभदायक है। धन-संग्रह करने के अनेक लाभ हैं। जिसके पास धन होता है लोग उसका सम्मान करते हैं। उसे उच्च-से-उच्च पद प्रदान करते हैं, झुक-झुककर नमस्कार करते हैं। सब लोग उससे डरते हैं। फिर देखो! धन आराम के सारे साधन उपलब्ध कराता है। इससे प्रत्येक प्रकार का सुख मिलता है। चोर का भय हो तो चौकीदार रखे जाते हैं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि धन संग्रह करना अत्युत्तम काम है। जो लोग अपने पास धन नहीं रखते, वे दुःख में पड़े रहते हैं। क्या आप नहीं देखते कि निर्धन किस प्रकार दुःख उठाते हैं।"

गुरु ने फिर कहा- "पुत्र! तू गलत मार्ग पर चल रहा है। फिर सुनो, और समझो कि सुख धन के त्याग में है, संग्रह करने में नहीं।"

चेले ने कहा आपसे कौन सिर फोड़े। आपने तो एक ही रट पकड़ रखी है।

यह बातचीत यहीं समाप्त हो गई और

एक छोटे से जंगल के पश्चात् एक छोटी-सी नदी मार्ग में आ गई। गुरु और शिष्य दोनों किनारे पहुँचे। नौका विद्यमान थी। चेले ने झट से अपनी अण्टी में से दो पैसे निकाले और नौका पर सवार होकर किनारे के दूसरी ओर पहुँचकर ज़ोर से चिल्लाकर गुरु को कहने लगा- कहे गुरुजी! सुख धन जमा करने में है या त्याग करने में। अब भी आप समझें या नहीं?

गुरु- मूर्ख! क्यों उल्टी बातें करता है। सोच और समझ कि जब तक पैसा तेरे पास था जब तक तू नदी के इस किनारे पर था, परन्तु जब तूने पैसे का त्याग किया तभी तू पार पहुँचा।

चेले ने जब इस पहेली को समझा तब उसे अपने दर्शन पर पश्चात्ताप हुआ और गुरु को नमस्कार किया।

वस्तुतः सुख त्याग में है। सम्मान उसी धनिक का होता है जो अपना रुपया अच्छे कामों में खर्च करता है अथवा श्रेष्ठ कामों के लिए अपने धन का त्याग करता है। बस, असली सुख त्याग में है, न कि धन कज्जूसों की भाँति संग्रह करने में। जो लोग चेले की भाँति पहेली को समझ लेते हैं, वे सत्य को पा लेते हैं।

..... क्रमश

यमलोक के राक्षस रो पड़े, भ्रमणकर भूलोक

● देवनारायण भारद्वाज

रामलीला, कृष्णलीला या अन्य कोई भी पौराणिक कथा, जब नाटक रूप में प्रदर्शित की जाती है, उनमें राक्षसों को कभी भी रूदन करते हुए नहीं, प्रत्युत किसी न किसी को रोदन कराते हुए ही दिखाया जाता है। राक्षस अपने अत्याचारों की मार से दूसरे सरल स्वभाव सज्जन समुदाय को पीड़ित करके रुलाते तथा स्वयं अट्टहास करते दिखाए जाते रहे हैं। राक्षसगण भौतिक रूप से शारीरिक शक्ति एवं सम्पदा इतनी अधिक जुटा लेते हैं, सामान्यजन उसका अनुमान भी नहीं लगा पाते हैं। इसी अतिशय अनाधिकार के आधार पर वे अहंकार के चरम पर पहुँच जाते हैं। भले ही उनके पारिवारिक सम्बन्धी एवं संगी-साथी मरते चले जाते हैं, किन्तु राक्षस स्वयं को अमर मान कर अन्तिम श्वास तक संहार प्रवृत्त बने रहते हैं। हमें भला कौन मार सकता है? हमें तो वरदान मिला है, अब तो हमें मरना ही नहीं है? अन्ततः वरदान प्रदाता ही इन राक्षसों को मारने का उपाय बताते हैं, और वे मरकर यमलोक पहुँच जाते हैं। वहाँ जो यातनाएँ इन्हें भोगनी पड़ती हैं, उनसे दण्डित होकर वे प्रकम्पित होकर त्राहि-त्राहि कर उठते हैं, और इनके आत्मिक सुधार-परिष्कार की भट्टियाँ जल उठती हैं, वे उसमें दहकने लगते हैं। बचपन में मेलों में यमपुरी की प्रदर्शनी दिखाई जाती थी, जिसे देखकर सामान्य जन पाप-अत्याचारों से दूर रहने की शपथ खाते थे।

इसी प्रताड़ना पूर्ण परिशोधन की प्रक्रिया के मध्य राहत देने के लिए, राक्षसों की प्रार्थना पर इन्हें यमलोक से भूलोक के भ्रमण हेतु भेज दिया गया। यमलोक की यातनाओं के कारण इनके हृदय की कठोरता कोमलता में ढलने लगी थी और यहाँ भूलोक पर मानव-हृदयों की सुमधुर कोमलता-क्रूर कठोरता में जमने के कारण इन राक्षसों को जो विचित्र दृश्य देखने को मिले, उनसे इनके हृदय भी दहल गए, और ये रोने के लिए बाध्य हो गए। सबसे पहले इन्द्रप्रस्थ जिसे अब दिल्ली-नई दिल्ली राजधानी क्षेत्र से जाना जाता है, के कैलाश ही नहीं ग्रेटर कैलाश में पहुँचे। देखते क्या हैं? यहाँ एक वृद्धा अति भव्य आवास में रहती हैं। इनके पुत्र विश्व-संस्था संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत के सम्मान्य प्रतिनिधि के पद पर नियुक्त हैं। उनका पुत्र अपनी पितामही के साथ रहता है, किन्तु वह अपनी पितामही से बहुत रुष्ट है, वह उन पर दबाव बनाता रहता है कि अपना भव्य भवन उनके

नाम करे दें, किन्तु वे सहमत नहीं हैं। एक रात्रि वह पौत्र अपने शयन कक्ष का 'ऐसी' खराब होने के कारण स्वागत कक्ष में सो गया। प्रभात बेला के बाद भी उठा नहीं, स्वच्छता कर्मी महिला कक्ष की सफाई के लिए प्रतीक्षा कर रही थी इसलिए पितामही ने उसे जगा दिया। इससे बहुत क्रुद्ध हुआ और उस 86 वर्षीय कृशकाय देवी के सिर को दीवाल से मार दिया। अन्य प्रकार से भी शारीरिक प्रताड़ना की, अन्ततः उसे पुलिस को बुलाना पड़ा। यह दृश्य देखकर मानव तो मानव दानव भी रो पड़े। वह राजधानी के अनेकशः दयनीय दृश्य देखकर वे ताजमहल की अनुराग नगरी आगरा के आकाश पर पहुँच गए।

यहाँ उन्होंने देखा कि एक वृद्धा ने घरों में काम करके अपने पुत्र-पुत्री का पालन-पोषण किया। विवाह किया। स्वावलम्बी बनाया। इतने पर भी पुत्र-पुत्रवधू ने 50 गज के भूखण्ड को उनके नाम न कराए जाने के कारण माता की हत्या कर दी। धन्य हो पुत्री को, जिसने सारा रहस्य खोलकर आपराधिक कानूनी कराई। पुत्री के करुण क्रन्दन को सुनकर राक्षसगण भी रुदन कर उठे। राक्षस उड़ते उड़ते रामपुर क्षेत्र में आ गए। यहाँ एक किशोरी को एक नहीं अनेक युवकों द्वारा उसके साथ अति अश्लील खिलवाड़ करते देखा, और देखा लोगबाग उसे बचाने के बजाय उसके चित्र खींचकर सुरक्षित कर रहे हैं, किन्तु उस किशोरी को सुरक्षित नहीं कर रहे हैं। उस किशोरी के भयावह चीत्कार को सुनकर राक्षस भी रो पड़े। इस प्रकार भूलोक की अतिशय दुर्दशा देखकर वे यमलोक की ओर लौट ही रहे थे, कि मार्ग में एक पाण्डाल में अपार भीड़ दिखाई दी। वहाँ आज भी रामकथा सुनाई जा रही थी और स्त्री और पुरुष उसमें विभोर होकर झूम रहे थे:-

पुनि रघुनाथ चले वन आगे। मुनिवर वृन्द
विपुल संग लागे॥

अस्थि समूह देखि रघुराया। पूँछी मुनिन्ह
लागि अति दाया॥

जानतहूँ पूछिअ कस स्वामी। सब दरसी तुम्ह
अंतरजामी॥

निसिचर निकर सकल मुनि खाए। सुनि
रघुवीर नयन जल छाए॥

निसिचर हीन करउँ महि, भुज उठाई पन
कीन्ह।

सकल मुनिन्ह के आश्रमहि, जाइ जाइ सुख
दीन्ह॥

राक्षस लोग कुछ और आगे बढ़े तो देखते हैं- एक विशाल मण्डप में गीता-ज्ञान कथा चल रही है। यहाँ पर भी अपार संख्या में श्रोता बैठे सुन रहे हैं- गर्दन हिला हिला, ताली बजा बजाकर झूम रहे हैं।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युग युगे॥

अर्थात् सज्जनों की रक्षा और दुष्टों के विनाश हेतु मैं युग युग में प्रकट होता हूँ। श्रोताओं और कथाकारों को यह नहीं पता कि त्राणकर्ता उद्धारक प्रकट कहाँ से होता है, वे आसमान या धरती से प्रकट होने की प्रत्याशा लगाए रहते हैं, किन्तु वास्तव में ऐसा महावीर इन्हीं श्रोताओं के मध्य से ही प्रकट होता है। यह दृश्य देखकर कुछ और बढ़े तो, उन्हें वहाँ मिला एक आश्रम-वैदिक आश्रम, जहाँ पर आचार्य जी वेद कथा सुना रहे थे।

पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तराव्यः।

पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद्भानो
यविष्य॥

(ऋ. 1.36.15)

"अग्ने" हे सर्वशत्रुदाहकाने परमेश्वर! "रक्षसः" राक्षस हिसंक दुष्ट स्वभाव देहधारियों से (नः) हमारी (पाहि) रक्षा करो। (धूर्तराव्यः) कृपण व धूर्त मनुष्यों से भी (पाहि) हमारी रक्षा करो। (रीषत उत वा जिघांसतो) जो हमको मारने लगे या जो मारने की इच्छा भी करता है (बृहद्भानो यविष्य) हे महातेज बलवत्तम (पाहि) उन सबसे हमारी रक्षा करो। मन्त्रार्थ के बाद आचार्य जी ने और भावाशय को स्पष्ट किया। अग्नि ईश्वर का नाम है किन्तु यहाँ पर मानव समुदाय से अग्रणी बनकर योद्धा की भाँति जो अन्याय-अत्याचार को मिटाने के लिए सन्नद्ध होता है, वही अग्नि है-अग्रगण्य है। जहाँ सर्वोपरि प्रकाशलोक में सूर्य, अन्तरिक्ष मध्य लोक में विद्युत है वहाँ भूलोक की प्रत्यक्ष प्रकट होने वाली यही तापदायक अग्नि है। इसलिए कहीं ऊपर से किसी अवतार या प्रकटीकरण की प्रतीक्षा न करके, इसी धराधाम से ही इसके उद्धारक का जन्म या सृजन होता है। पुराण की कथा के अनुसार उन्होंने बताया कि राष्ट्र के हिरण्य अर्थात् स्वर्ण-समृद्धि के पश्यक अर्थात् द्रष्टा-रक्षक-रखवाले विषम विपरीत आचरण करके पश्यक से कश्यप बन जाते हैं, तब उनका नाम पड़ जाता है- हिरण्यकश्यप जो राष्ट्र के उत्पन्न प्रह्लाद का विनाश करने पर उतारु हो

जाते हैं। राष्ट्र के अग्निव्रती प्रजाजन अपना सर्वहितैषी संघटन बनाते हैं जो राष्ट्ररक्षा के लिए स्तम्भ बनता है, इसी सुदृढ़ स्तम्भ में से प्रकट होता है नरों में सिंह-नरसिंह, जो ऐसे क्रूर अत्याचारी हिरण्यकश्यप का नाश करके राष्ट्र के प्रह्लाद-सुख-सौमनस्य को जीवित कर देता है। इस प्रकार की सार्थक हो उठता है- महामति महात्मा विदुर का श्लोक:-

गतिरात्मवतां सन्तः सन्त एव सतां गतिः।

असतां च गतिः सन्तो नत्वसन्तः सतां गतिः॥

(अध्याय 2

श्लोक 47)

भावार्थ- प्राणिमात्र को सहारा देने वाले साधु सन्तजन हैं, साधु पुरुषों को सहारा देने वाले भी सन्त सज्जन ही हैं, ये साधुजन दुष्टों को भी सहारा प्रदान कर देते हैं, किन्तु दुष्ट लोग ऐसे होते हैं जो किसी भी दशा में साधु पुरुषों की गति-प्रगति में सहायक बनाना तो दूर अवरोधक ही बने रहते हैं। ऐसी विकट स्थिति में श्रीमद्भगवद्गीता के उपरि वर्णित श्लोक के परिपालन हेतु किसी न किसी महापुरुष को प्रकट होना पड़ता है। साधु वे हैं जो धर्मानुसार अपना जीवन व्यतीत करते हैं, मानवता का मान बढ़ाते हैं। स्वार्थ काम व लोभ से परे हैं और परमात्मा के प्रति भक्तिभाव रखते हैं। दुष्ट वे हैं जो अधर्म से जीवनयापन करते, समाज-राष्ट्र के नियमों का उल्लंघन करते हैं। जो व्यर्थ हैं, कुटिल हैं, लोभी हैं, हिसक हैं, बलात् दूसरों की सम्पत्ति पर अधिकार करते हुए विभिन्न प्रकार के वीभत्स कुत्सित काण्ड करते हैं। ऐसे दुष्कृताम् की गणना करने से कोई लाभ नहीं, उनके द्वारा प्रदान किए पाप-शाप-संताप तो सभी अनुभव करते हैं; किन्तु विशिष्ट साधु सत्कारी पुरुषों के पदार्पण का आभास भी भारतवासी करके सान्त्वना प्राप्त कर सकते हैं, वे हैं देदीप्यमान नक्षत्र नरेन्द्र मोदी और जाज्वल्यमान सुक्षत्रक आदित्य योगी। आसुरी शक्तियाँ इनके मार्ग की अवरोधक भले हैं, किन्तु ये अपने लक्ष्य पर दृढ़ रहते हुए "चरैवेति चरैवेति" कहते हुए अग्नि की भाँति अग्रणी बनकर राष्ट्ररक्षा के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा प्रतीत होते हैं, और भारत माता के सच्चे सपूत बनकर नेतृत्व प्रदान कर रहे हैं।

यमलोक में यम-यातनाओं से परिष्कृत

शेष पृष्ठ 05 पर

ईश्वर की अवधारणा

● राजेन्द्र प्रसाद आर्य

आज सदियों से लोगों में इस बात की बहस छिड़ी हुई है कि “क्या ईश्वर है अथवा नहीं”, जिस वजह से मानव समुदाय आज दो वर्गों में विभाजित हो गया है। एक बड़ा वर्ग वो है जो ईश्वर की सत्ता में विश्वास रखता है वहीं दूसरा वर्ग वो है जो मानता है कि ईश्वर नाम की कोई चीज़ नहीं है और संसार में जो कुछ भी हो रहा है वो अपने आप ही हो रहा है और इनकी संख्या भी करोड़ों में है।

यहाँ हम न तो धर्म ग्रन्थों का सहारा ले रहे हैं और न ही कोई तर्क वितर्क बल्कि कुछ तथ्यों को प्रस्तुत कर रहे हैं, देखना होगा कि ये तथ्य किस ओर ईशारा कर रहे हैं।

आज दुनियाँ में अरबों खरबों लोग हैं और इसके पूर्व में भी अरबों खरबों लोग पैदा हुए और मर भी गए, आगे भी कितने अरबों खरबों लोग पैदा होंगे पर कितना बड़ा आश्चर्य है कि इनमें से किसी का भी चेहरा किसी अन्य से नहीं मिलता है, यानि सबके चेहरे अलग-अलग प्रकार के हैं, यहाँ तक कि जुड़वाँ बच्चों में भी बहुत अधिक समानता होते हुए उनमें भी कुछ अन्तर होता है जिसे उसकी माँ अवश्य ही जानती है। यहाँ पर यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि वो कौन है? जो हर किसी का एक दूसरे से अन्तर बनाए रखता है। उनका सिर्फ चेहरा ही नहीं उनके फिंगर प्रिन्ट भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। यहाँ पर थोड़ी देर के लिए कल्पना की जाए कि उनके चेहरे अलग-अलग प्रकार के न होकर सिर्फ दो प्रकार के हों, पहला मर्दों के लिए अलग और महिलाओं के लिए अलग तो फिर क्या होगा और उनकी आवाज़ें भी अलग-अलग प्रकार की न होकर एक ही प्रकार की हों तो कितनी बड़ी अव्यवस्था फैल जाएगी। पर ऐसा न होकर अलग-अलग प्रकार की है। निर्माण करने वाले को इसका पुर्वानुमान था, इसी से पता चलता है कि वो कितना बड़ा दूरदर्शी भी है। सिर्फ मनुष्य का चेहरा ही नहीं बल्कि जानवरों का चेहरा भी अलग-अलग प्रकार का होता है तभी तो हजारों भेड़ों की झुण्ड

में भी भेड़ का बच्चा अपनी माँ को ढूँढ़ लेता है और उसका ही दूध पीता है।

प्रकृति में भी हजारों प्रकार की वनस्पतियों की प्रजातियाँ होती हैं पर हर वनस्पति के पत्ते, फूल और फल अलग-अलग प्रकार के होते हैं, सबके रूप, रस, गंध और स्वाद भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं, क्या रहस्य है?

ईश्वर को जानने के लिए बहुत दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। हम निर्माणकर्ता की सबसे अनुपम कृति इस मानव शरीर को देखें तो पता चलेगा कि कितनी ही बुद्धिमत्तापूर्वक इसकी संरचना की गई है। विज्ञान का विषय है कि कर्ता के बिना किसी क्रिया का सम्पादन नहीं होता है और न ही निर्माण। निर्माण है तो कोई निर्माणकर्ता भी होगा, रचना है तो कोई रचनाकार भी होगा। ऐसा बिल्कुल संभव नहीं कि निर्माण है मगर निर्माणकर्ता नहीं हो। तो आइए थोड़ा देखें कि इस मानव शरीर निर्माण में कितनी बुद्धिमत्तापूर्वक कौन-कौन सी चीज़ें प्रदान की गई हैं।

चमड़ी से ढका मानव शरीर बिना सूई-धागे के किस प्रकार से सिया गया है कि पता ही नहीं चलता। मानव शरीर में 36 लीटर पानी रहता है, इसमें चीनी 1 किलो, अमोनिया 2 किलो, नमक 150 ग्राम, लोहा इतना कि अगर जमा किया जाए तो 2 इंच मोटी कील बन सकती है गन्धक इतना कि 100 दिया सलाई की तीलीयाँ बनाई जा सकती हैं, चर्बी इतनी कि इससे 7 साबुन की टिकिया बनाई जा सकती है। 72 करोड़ 72 लाख 10 हजार 110 नस नाड़ियों का जाल शरीर के कोने-कोने में फैला हुआ है। आज तक आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी इसकी गिनती नहीं कर सका है।

सवाल है कि मानव शरीर में 36 लीटर पानी किसने और क्यों सुनिश्चित किया है क्योंकि पानी की मात्रा अगर बढ़ जाए तो भी परेशानी और अगर कम हो जाए तो जान पर बन जाती है इसलिए तुरंत ही बाहर से पानी चढ़ाया जाता है।

इसी प्रकार से अन्य चीज़ों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है।

आगे देखिए मानव शरीर में 1 मिनट में 16-17 श्वासें निरन्तर चल रही हैं। यह दिल 24 घंटे में 1 लाख 13 हजार बार धड़कता है इस प्रकार यह पूरे जीवन काल में करोड़ों बार धड़कता होगा और फिर एक दिन ऐसा आता है जब दिल धड़कना बंद हो जाता है और फिर जीवन लीला समाप्त हो जाती है, आखिर कौन है इसका नियंत्रणकर्ता।

एक वयस्क मानव शरीर में 5-6 लीटर रक्त होता है, महिलाओं में इसकी मात्रा 1/2 लीटर कम होती है, रक्त का कार्य ताप का नियंत्रण तथा शरीर की रोगों से रक्षा करना होता है। इस रक्त में निरन्तर संचार होता रहता है जिसे Blood Circulation कहा जाता है। क्या रक्त संचार अपने आप होता है?

मानव शरीर में 206 हड्डियाँ होती हैं। सिर में 29 हड्डियाँ होती हैं, रीढ़ में 26 रहती हैं, कपाल में 8, चेहरे में 14 और कान में 6 हड्डियाँ होती हैं। ईश्वर की अवधारणा में विश्वास नहीं रखने वाले कृपया यह बताएँ कि शरीर में 206 हड्डियाँ क्यों प्रदान की गई हैं? अगर 206 के बदले में सिर्फ एक हड्डी हो तो क्या हो जाएगा। यही होगा कि न तो हम उठ सकते हैं, नहीं मुड़ सकते हैं। और न ही चल-फिर सकते हैं। मानव शरीर के दोनों हाथों में 5-5 अंगुलियाँ प्रदान की गई हैं, अगर ये अंगुलियाँ न हों तो दुनियाँ का सारा मेकेनिज्म और टेक्नोलॉजी धरी की धरी रह जाएगी। इसका मतलब है कि शरीर निर्माण की हर बात में विज्ञान छिपा हुआ है।

अब हम मानव शरीर से बाहर आकर इस ब्रह्माण्ड को देखें। ब्रह्माण्ड में सभी ग्रह और नक्षत्र गतिशील हैं। हमारी पृथ्वी भी अपने अक्ष पर एक हजार मील प्रत्येक घंटे की चाल से लट्टू की तरह घूमती है जिस वजह से दिन और रात होते हैं। इसी प्रकार

हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भी 66 हजार मील प्रति घंटे की रफ्तार से चक्कर लगाती है और 365 दिन 56 मिनट और 46 सेकेण्ड में एक चक्कर लगाती है। यही कारण है कि 365 दिनों को एक साल माना जाता है। हमारा सूर्य भी अपने सभी ग्रहों और सौर मण्डल के साथ लेकर घूम रहा है, सूर्य प्रत्येक घंटे में 40 हजार मील की रफ्तार से चलता है। कितना बड़ा आश्चर्य है कि सभी ग्रह और नक्षत्र नियमपूर्वक चलते रहते हैं, न कभी थकते हैं, न कभी रुकते हैं और न ही कभी आराम करते हैं। इतना ही नहीं ये अरबों खरबों ग्रह और नक्षत्र गतिमान होते हुए भी आपस में नहीं टकराते हैं। कैसी है ये व्यवस्था। प्रश्न उठता है कि वो कौन है जो सूर्य और पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों और नक्षत्रों में गति का संचार करता है। प्रकाश भी 1 लाख 86,000 मील प्रत्येक सेकेण्ड की चाल से चलता है। इसी प्रकार आवाज़ की भी अपनी गति होती है। क्या प्रकाश और आवाज़ ने, जो निर्जीव हैं अपनी गति स्वयं ही निर्धारित कर ली है।

इस प्रकार के हजारों प्रश्न हैं जिनका उत्तर ईश्वर की अवधारणा से इन्कार करते हुए ढूँढ़ना बहुत मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन है। मैं तो पहाड़ों और नदियों में जंगलों के झूमते वृक्षों में, समुद्र की उफनती लहरों में, झरने के कलकल करते जलप्रपात में, तारों भरे आकाश में, आग की धधकती ज्वाला में, इन अरबों खरबों ब्रह्माण्डों में, इस अनन्त विश्व में, इस आकाश के भीतर दिखाई देने वाले इस अन्तिम तारे में भी जिसके 1 लाख 86000 मील प्रत्येक सेकेण्ड की चाल से चलते हुए प्रकाश को पृथ्वी तक पहुँचने में एक करोड़ वर्ष लगते हैं मैं उसी प्रियतम प्रभु को देखता हूँ।

इस लेख को पढ़ने के पश्चात् ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करने वाले लोगों में ईश्वर के होने अथवा नहीं होने की जो भ्रान्तियाँ हैं, वो दूर हो सकें तो इसे मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।

आर्य समाज
मुजफ्फरपुर (बिहार)

पृष्ठ 04 का शेष

“यमलोक के राक्षस रो पड़े...”

राक्षसगण भूलोक के नरपिशाचों द्वारा की जा रही है इन सामूहिक हत्याओं के भयंकर चीत्कार को देखकर रोते रोते थक चुके थे, और शीघ्र ही भूलोक से वापस यमलोक को उड़ान भरने वाले ही थे कि श्रीमान सूरज स्वरूप ने अपने प्रिय मित्र स्वप्न बिहारी

को पुकार लगा दी— उठो भइया, सवेरा हो गया है— चलो भ्रमण पर चलते हैं— वहाँ पार्क में सभी मित्र मण्डली हम लोगों की प्रतीक्षा कर रही है। सूरज स्वरूप के साथ मित्र स्वप्न बिहारी ने पहुँचकर अपना यही स्वप्न सविवरण सुना दिया और बता दिया

कि वर्तमान में हो रहे मानवीय दुर्दमनीय अत्याचार इतने असहनीय हैं कि यमलोक से भूलोक पर आकर अशरीरी व्योम विहारी राक्षस भी रो पड़ते हैं।

‘वरेण्यम्’ अवन्तिका (प्रथम)
रामघाट मार्ग, अलीगढ़ (उ.प्र.) 2020

सदा सुख की चाहत

● यश वर्मा

योग वशिष्ठ रामायण में आता है कि वशिष्ठ ऋषि राम जी से कहते हैं कि हे राम, जो बोध से रहित है परन्तु चल ऐश्वर्य से बड़ा है; तुच्छ अज्ञान उसे नष्ट कर देता है। जैसे बल रहित सिंह को गीदड़, हिरण आदि भी मार सकते हैं। बोध से विवेकरूपी फल का जन्म होता है। जैसे जानकार नाविक समुद्र पार कर देता है वैसे सम्यक ज्ञान संसार रूपी भवसागर से पार कर देता है। सम्यक ज्ञान अर्थात् सही ज्ञान। सही ज्ञान तो यही है कि सदा सुख में रहे।

वशिष्ठ ऋषि के कहने का भाव है कि जिसके पास ऐश्वर्य तो है परन्तु सही ज्ञान रूपी बल नहीं है उसे सदा सुख प्राप्त नहीं होता। कोई विद्वान् अथवा संत महात्मा हमें कहे कि जा बेटा 2 घण्टे सुखी रहना, फिर दुखी हो जाना। हम कहेंगे कि यह कैसा आशीर्वाद है। फिर वह कहे दो दिन सुखी रहो फिर दुखी हो जाना। हम कहेंगे कि यह भी ठीक नहीं है। फिर वह कहे दो सप्ताह, दो मास, दो वर्ष या एक जन्म सुखी रहना, अगले जन्म दुखी हो जाना। हम कहेंगे कि यह ठीक नहीं। हमें तो सदा सुख चाहिए। साथ में स्वतंत्रता चाहिए। किसी पक्षी अथवा जानवर को पिंजरे में बन्द कर दो, फिर देखो वह कैसे फड़फड़ता है। ऐसे ही हम एक कमरे में बैठे हैं अन्दर से कुण्डी लगा रखी है तो ठीक है लेकिन कोई बाहर से कुण्डी लगा दे तो हम स्वतंत्र अनुभव नहीं करते। जैसे बड़े-बड़े नेताओं को कई बार हाऊस अरैस्ट कर दिया जाता है। घर-परिवार सुख सुविधा होते हुए भी दुख का अनुभव करते हैं। हम इस दुनिया में स्वतन्त्र रहते हुए सदा-सुख चाहते हैं।

बात आ गई दुनिया की। एक बार विद्वानों की एक गोष्ठी चल रही थी कि यह दुनिया क्या है? पहला विद्वान् कहता है कि यह दुनिया एक मुसाफिरखाना है। सब यहाँ पर यात्री हैं। यात्रा पर आए हैं। कब यात्रा प्रारम्भ हुई, कब समाप्त हो जाएगी कुछ पता नहीं। इतने में वहाँ से एक साधु उठने लगे तो एक दूसरे संत ने पूछ लिया आप भी यात्री हैं, हाँ मैं भी यात्री हूँ। अच्छा, अपना लोटा सँभाल के रखना। मैं तो सदा लोटा सँभाल के रखता हूँ। पहला संत कहता है मेरी बात समझे नहीं। साधु कहता है आप ही समझा दो। मेरा अभिप्राय मन रूपी लौटे से है। अब बताओ आपका लोटा

आपके पास है या नहीं। साधु ने आँखे बन्द कीं तो कभी हरिद्वार, तो कभी काशी, कभी पहाड़ों और नदियों के दृश्य, कभी 25 वर्ष पहले छोड़े हुए बच्चे और व्यवसाय, हम सबको दुनिया में रहना इस प्रकार है कि अपना मन रूपी लोटा अपने पास रखें व इसे साफ रखें।

दूसरा विद्वान् कहता है कि यह दुनिया एक युद्धस्थल है। हम सब सैनिक हैं। कभी हम बाहर वालों से लड़ रहे हैं तो कभी अन्दर वालों से। बाहर वाला पड़ोसी, कार्यालय कर्मचारी, अधिकारी, व्यवसाय में मालिक या मजदूर, सड़क पर चलता कोई व्यक्ति, घर में कोई भी सदस्य या रिश्तेदार, अथवा अपने काम क्रोध आदि से हमारा युद्ध चलता रहता है।

तीसरा विद्वान् कहता है कि यह दुनिया तो नौका है हवा चाहे जिधर ले जाए। अब तो पश्चिमी सभ्यता इस कदर फैल गई है कि अपनी वैदिक संस्कृति और अपनी परम्पराओं को ही भूल बैठे हैं। मस्तिष्क की ठंडक, आँख की शर्म, वाणी की नम्रता और हृदय का रहम न जाने कहां खो गए हैं। एक दूसरे को मरने मारने पर उतारु हो गए हैं।

चौथा विद्वान् कहता है कि यह दुनिया तो लेन देन की मण्डी है। उसने एक कथानक द्वारा समझाया कि दो व्यक्ति गाँव से व्यापार के लिए निकले और बम्बई जा पहुँचे। वहाँ व्यापार करते-2 काफी धन कमाया। लगभग दस वर्ष बीते तो सोचा अब घर चलें। दोनों चल पड़े। एक को रास्ते में लालच आ गया। सोते समय दूसरे की रास्ते में हत्या कर दी और उसका मैडिकल सर्टीफिकेट भी बनवा लिया कि उसकी प्राकृतिक मृत्यु हुई है। घर जाकर उसके परिवार को पचास हजार रुपए दे दिए व बता दिया कि उसकी प्राकृतिक मृत्यु हो गई है। उसके परिवार ने विश्वास कर लिया। इस व्यक्ति ने विवाह किया। बहुत सुन्दर पुत्र हुआ। धन-धान्य तो था ही। पढ़ाया लिखाया पुत्र को, वह जवान हुआ उसका विवाह निश्चित कर दिया। लड़का बहुत बीमार हुआ, सारा धन बीमारी पर लग गया। कोठी-कार सब बिक गया लेकिन वह ठीक नहीं हुआ। एक दिन पिता अपने पुत्र के पास बैठा था तो पुत्र पिता को कहता है कि तुमने मुझे पहचाना, पिता कहता है तुम मेरे पुत्र हो। पुत्र कहता है मैं

तुम्हारा वही मित्र हूँ जिसकी तुमने हत्या की थी। यह कहकर उसने एक हिचकी ली और देह त्याग दी, इस विद्वान् ने कहा कि यह दुनिया लेन देन की मण्डी है। जैसे कर्म करते हैं वैसे भुगतने पड़ते हैं।

पाँचवाँ विद्वान् कहता है कि यह दुनिया निर्वाचन स्थल है कभी आर्य समाज का, कभी गुरुकुल, कभी केन्द्रीय सभा, कभी पंचायत, कमेटी, एम.एल.ए., एम.पी., प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति का निर्वाचन है तो कभी हम घर पर कपड़े का सलैक्शन करते हैं कि आज कौन से कपड़े पहनने हैं तो कभी दाल सब्जी का सलैक्शन करते हैं। घूमने जाना है तो कहा जाना है शिमला, मसूरी, नैनीताल, मनाली या यूरोप, यू.एस.ए. इंग्लैंड आदि।

छठा विद्वान् कहता है कि यह दुनिया तो अक्समात् है। यहाँ आना-जाना लगा रहता है। कब जन्म हो, कब मृत्यु हो जाए, कुछ पता नहीं। अगला विद्वान् बोला कि यह दुनिया बड़ी अजीब चीज है। कोई यहां रो रहा है तो कोई हंस रहा है।

यह दुनिया एक यात्रा है, युद्धस्थल है, नौका है, लेन-देन की मण्डी है, निर्वाचन स्थल है, अक्समात् है तो फिर मनुष्य को चैन कहाँ है? इस दुनिया में रहना तो मनुष्य को है। यह दुख तो मनुष्यों के विचारों से बनता है। जैसा वह सोचता है वैसी उसकी दुनिया बन जाती है। सुखी रहने की आदत डालो तो सुखी रहोगे, दुखी रहने की आदत होगी तो दुखी रहोगे। चेहरे पर सदा मुस्कराहट रख के देखो, सारी दुनिया मुस्कराती नज़र आएगी। एक गुरुजी के दो शिष्य थे। गुरुजी जी ने सोचा आज इनकी परीक्षा लेते हैं। दोनों को थोड़े-थोड़े फूल दे दिए और कहा, जाओ एक-2 फूल उस व्यक्ति को बाँटकर आओ जो तुम्हें मुस्कराता हुआ मिले। दोनों शिष्य फूल लेकर चल दिए। एक शिष्य सारे फूल एक घन्टे में बाँटकर आ गया, दूसरा शिष्य देर शाम बिना फूल बाँटे आया। गुरुजी ने दोनों से उस विषय पर बात की। पहले शिष्य ने बताया जो लोग मुझे जानते थे उन्हें दूर से देखकर मुस्कराता गया और वह भी मुझे देखकर मुस्कराए और मैंने उनको एक-2 फूल दिया। जो मुझे नहीं जानते थे उन्हें भी दूर से देखकर मुस्कराता चला गया। उन्होंने भी मुस्कराकर मुझे से पूछा क्या तुम मुझे जानते हो। तब मैंने उन्हें भी एक

फूल दिया और कहा अब जान गया हूँ दूसरे ने बताया कि मैं सबको देखता गया परन्तु मुझे कोई मिला ही नहीं जो मुस्करा रहा हो।

बात चल रही थी मनुष्य की। ऐतरेय उपनिषद् में आता है देवताओं ने पूछा कि हम कहाँ रहें। भगवान ने बहुत सुन्दर गाय प्रकट कर दी। देवताओं ने कहा कि इसे तो बाँध कर दूध दोह लेते हैं और कभी-2 डंडे से पिटाई भी कर देते हैं। तब भगवान ने एक अति सुन्दर बलिष्ठ घोड़ा प्रकट कर दिया। देवताओं ने उसे देखकर कहा, है तो अच्छा परन्तु इसे बगगी में जोत दिया जाता है, चाबुक से मारा जाता है। इस प्रकार भगवान ने कई जानवर प्रकट किए परन्तु उन्हें कोई पसन्द नहीं आया। अन्त में मनुष्य प्रकट किया तब देवताओं ने कहा यह उत्तम है, ठीक है।

अष्ट चक्रा नव द्वारा देवानां पुरयोध्या॥

लेकिन हम मनुष्य किसे कहें। राम को कहें या रावण को, कृष्ण को कहें या कंस को, रामदेव को कहें या रामरहीम को, दयानन्द को कहें या ज़हर देने वाले जगन्नाथ को। आज तो मानव ही मानव का दुश्मन बना हुआ है। ऐसे-2 हथियार, बम बना लिए हैं चाहें तो मिनटों में मानव जाति को ही समाप्त कर दें। महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि मनुष्य वही है जो दूसरे के लाभ-हानि व सुख दुख को अपना लाभ हानि तथा अपना सुख दुख समझे। ज़रा विचार करें क्या हम इस कसौटी पर खरे उतरते हैं। आज के मनुष्य को दूसरे की ज़रा भी उन्नति सुहाती नहीं है। थोड़ा सा कोई गाड़ी चलाते हुए आगे निकल जाए तो आज का मनुष्य कई बार उसकी हत्या तक कर देता है। कोई दूसरा ज़रा सी उन्नति कर ले तो आज का मनुष्य जल भुन जाता है और द्वेष करने लगता है।

मानवता को बचाना होता तो यजुर्वेद का एक मन्त्र ही काफी है:-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् तेन त्यक्तेन भुज्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्वनत्
वेद के एक-2 मन्त्र में मनुष्य के जीवन के लिए गहन रहस्य छिपा हुआ है। आओ हम इस मन्त्र पर विचार करते हैं।

ईशावास्यमिदं सर्वं अर्थात् ईश्वर वास कर रहा है सभी स्थान पर। कण कण में अणु अणु में बसा हुआ है लेकिन हम उस

ईश्वर को ही भुला बैठे हैं। वह हमें नज़र नहीं आता। उसे देखने वाली दृष्टि चाहिए। इस आँख से थोड़े ही न दिखाई देगा। सूर्य है तो हम उसे इस आँख से देख सकते हैं लेकिन दृष्टिहीन व्यक्ति तो सूर्य को भी नहीं देख सकता भौतिक जगत हो या ईश्वर हो, उसे देखने वाली शक्ति चाहिए, प्रभु दर्शन की इच्छा होगी तभी तो प्रभु के दर्शन होंगे। एक परिवार के दस छोटे बड़े सदस्य मेले में गए। वापिस आए तो किसी ने पूछ लिया मेले में क्या देखा। सभी ने अलग-2 उत्तर दिया, जिसमें जो इच्छा थी उसने वहीं देखा। इसी प्रकार जब हमारे में ईश दर्शन की तीव्र इच्छा होगी तभी तो वह हमें दिखाई देगा। एक बार एक राजा था। वह किसी से मिलता नहीं था। उसका देश बिल्कुल रामराज्य जैसा था। चारों ओर खुशहाली, लोग अति प्रसन्न। एक बार लोगों ने सोचा कि हम बहुत प्रसन्न हैं परन्तु हमने कभी अपने राजा को नहीं देखा। उसके दर्शन करने चाहिए। लोग मन्त्री से मिले और राजा के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की, मन्त्री ने लोगों की इच्छा राजा को बताई। राजा ने कहा यह मुझे नहीं मिलना चाहते। मन्त्री ने कहा, वह सचमुच आपके दर्शन करना चाहते हैं। राजा ने कहा कि आने वाली एक तारीख को प्रातः 10 बजे से 4 बजे तक उनको दर्शन दूँगा। सभी को यह बात सूचित कर दी गई। एक तारीख को राजा 10 बजे निश्चित स्थान पर बैठ गया। बहुत बड़ा मैदान था। गेट पर बड़े-बड़े बैनर लगा दिए गए व माईक पर अनाउंसमेंट चलती रही कि अन्दर जो भी सामान है वह आप जितनी मात्रा में ले जाना चाहें, मुफ्त/फ्री ले जा सकते हैं। वहाँ पर बेशकीमती वस्त्र, कारें, फर्नीचर, खाद्य-सामग्री, सोना, चाँदी, हीरे, मोती जो भी आप सोच सकते हैं, अकूत मात्रा में रख दिया गया। लोग आए तो बहुत खुश हुए। एक बार-दो बार तीन, चार, पाँच बार लेते गए और कहते गए कि राजा को अगली बार मिल लेंगे। इस प्रकार सायं 4 बजे राजा उठ गया। जाकर मन्त्री को कहा कि मैं न कहता था कि ये लोग मेरे दर्शन नहीं चाहते। हमारा भी इस संसार में वही हाल है। सारी उम्र सांसारिक पदार्थों को ही एकत्र करने में ही निकल जाती है और प्रभु से बिना मिले ही मौत की घण्टी बज जाती है।

सदा-सुख से रहना है तो उस प्रभु के प्रति विश्वास, प्रेम और श्रद्धा रखनी होगी। उसे हर स्थान पर, हर जीव में हाज़िर नाज़िर मानना होगा। तभी हमारे से कोई गलत कर्म, बुरा कर्म, पाप कर्म नहीं होगा।

वो ही हमारा माता, पिता, बन्धु, सखा है। तभी तो कहा है:-

**त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव**

महर्षि देव दयानन्द ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में लिखते हैं यदि ईश्वर से मिलना है तो नित्य प्रति एक घंटा ध्यान करें, यदि मुमुक्षु अर्थात् मोक्ष चाहते हैं तो दो घंटा ध्यान करें। हम यदि जीवन में सुख शांति, आनन्द माधुर्य चाहते हैं तो प्रभु की ओर अग्रसर होना होगा। यदि हमें कोई एक गिलास पानी भी दे दे तो हम उसे थैंक्यू (धन्यवाद) बोलते हैं। उस प्रभु ने हमें इतने अच्छे माता-पिता, भाई-बहन, सखा, पुत्र-पुत्री, धन-धान्य दिया, सब कुछ दिया, हमारे शरीर के अंग-प्रत्यंग, नस, नाड़ी तंत्र, रक्त, हृदय, श्वास-प्रश्वास को चलने की शक्ति दे रहा है, रात्रि को सुलाता है प्रातः नवजीवन की स्फूर्ति देकर जगाता है, क्या हमें उसे भूल जाना चाहिए, नहीं, कभी नहीं। उसे बारम्बार धन्यवाद करना चाहिए और सदा उसे याद करते रहना चाहिए। उसका सदा सिमरन करते रहना चाहिए, उसके नाम में सदा सुख है।

एक व्यक्ति कहता है कि सब जगह भगवान है तो फिर दुनिया कहाँ है? जैसे ताँबे के तार में विद्युत मौजूद है वैसे ही पंचभूतों में वह भगवान भी मौजूद है। हर स्थान पर रेडिएशन मौजूद है, मोबाइल चलाओ, टी.वी. चलाओ, अन्य उपकरण चलाओ पर रेडिएशन नज़र तो नहीं आती परन्तु उसके आस्तित्व से इन्कार तो नहीं कर सकते। इसी प्रकार प्रभु नज़र नहीं आते परन्तु यह संसार रूपी रचना है तो रचनाकार भी अवश्य है। हाँ नज़र उसे आता है जिसकी ऋतम्भरा बुद्धि होती है। ऐसी बुद्धि बनती है सात्विक भोजन, स्वच्छ हवा, अच्छी संगति, अच्छे विचार और अच्छे ग्रन्थों के स्वाध्याय से। इसलिए हम अपनी बुद्धि को सुधारें, मननशील बनें, हानि-लाभ का विचार करें और फिर कार्य करें।

इस वेद मन्त्र का दूसरा भाग है:- 'जगत्यां जगत्' यह जगत चलायमान है, अस्थिर है, परिवर्तनशील है, सत्य तो है परन्तु सदा रहने वाला नहीं है। सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, पृथिवी सब गतिमान है। गतिमान भी ऐसे हैं बहुत ही योजनाबद्ध (सिस्टमैटिक)। यह नहीं कि हर समय आपस में टकराते रहें। ये सब तो गति कर रहे हैं परन्तु मनुष्य प्रगति कर रहा है। पशु-पक्षी सब वैसे हैं जैसे हजारों लाखों

वर्ष पहले थे। केवल मनुष्य ही दिन प्रतिदिन प्रगति कर रहा है। असली जगत तो मनुष्य ही है। जन्म से मृत्यु तक परिवर्तन होता ही रहता है। मृत्यु भी अजीब चीज है। संत एकनाथ अपने एक भक्त को कहते हैं तू सात दिन में मर जाएगा। वह व्यक्ति जो न कभी धन खर्च करता था, न दान देता था, न व्यवहार अच्छा था, वह घर जाते समय बच्चों के लिए फल-मिठाइयां ले गया। घर पहुँच कर पत्नी व बच्चों को बुलाकर बड़े प्यार से उन्हें खिलाया और अच्छी-अच्छी बातें कीं। अगले दिन उन्हें वस्त्र आदि दिलवाए। अगले दिन काफी कुछ कई स्थानों पर दान दिया। अपनी कपड़े की दुकान पर ग्राहकों से बहुत अच्छा व्यवहार किया जिसे देखकर पार्टनर भी हैरान हुआ। इसी प्रकार छः दिन बीत गए। सातवें दिन संत एकनाथ उसके घर आए और उसका हाल-चाल पूछा तो उसने बताया कि छः दिन में उससे कोई गलत कार्य या गलत व्यवहार नहीं हुआ। तब संत ने कहा तुम्हारी अभी मृत्यु नहीं होने वाली। जब हम परमात्मा को और मृत्यु को याद रखते हैं तो गलत राह पर जा ही नहीं सकते। यह जगत तो एक धर्मशाला है। सब यहाँ आते हैं कुछ समय यहाँ रहते हैं फिर चले जाते हैं। एक महात्मा राजमहल में प्रवेश कर गया और कहने लगा यह तो धर्मशाला नहीं यह राजमहल है। संत कहता है राजा को बुला लो। राजा भी आ जाता है। संत कहता है आप कितने वर्षों से रहते हो यहाँ पर। राजा बोला 40 वर्षों से, पहले कौन रहता था, मेरे पिताजी, उनसे पहले उनके पिताजी.....।

फिर यह धर्मशाला ही तो हुई। राजा ने भी यह बात मान ली। अतः यह जगत तो चलायमान है। आया है सो जाएगा, राजा रंक फकीर।

मन्त्र का अगला भाग है:-

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः भुञ्जीथा
का अर्थ है भोगना। पहले कमाओगे तभी तो भोगोगे। इस शब्द में सारी दुनिया की प्लानिंग छिपी हुई है। फैक्ट्रियाँ बनाओ, मिल लगाओ, खेती करो, अधिकारी बनो, नेता, अभिनेता, डाक्टर, इंजीनियर बनो, हवाई जहाज़ बनाओ, शिप बनाओ, सब कुछ बनाओ, व्यापार करो राज्य करो, सब कुछ करते हुए इस कमाए हुए को भोगने की शक्ति भी रखो। यदि भोगने की शक्ति ही नहीं है तो सब बेकार है। डाक्टर ने कह दिया चीनी नहीं खानी, घी नहीं खाना, नमक नहीं खाना तो फिर खाना क्या है। पहले कह दिया भोग और साथ ही कह

दिया त्याग भाव से भोग। जब त्याग ही देंगे तो भोगेंगे कैसे? कहने का भाव है जितना खा सकता है खा, एक, दो, चार, छः रोटी खाएगा, कितने वस्त्र पहनेगा, कितनी कारें प्रयोग करेगा, जो भी है उसमें से मिल बाँट कर खा। अन्न, वस्त्र, धन जो भी है उसमें से कुछ न कुछ जिसे आवश्यकता है जैसे अनाथाश्रम, गुरुकुल, वृद्धाश्रम, कोड़ी आश्रम, निशुल्क शिक्षण संस्थान, उनको अवश्य दान कर। लोक भी सुधर जाएगा और परलोक भी सुधर जाएगा। समाज में कुछ समानता भी आएगी। समाज व राष्ट्र में उन्नति होगी।

मन्त्र का अन्तिम भाग है:- **मा गृधः कस्यस्विद्वनम्।**

अर्थात् अरे लालच न कर यह धन किसका है। धन खूब कमा लिया पर लालच न कर। इसमें जिसका जो हिस्सा बनता है उसे दे दे। सरकार का टैक्स बनता है तो टैक्स दे दे। मज़दूर का हक बनता है तो उसे पूरा मेहनताना दे दे। फैक्ट्री में वर्कर खुश हैं, प्राइवेट अस्पताल में वर्कर खुश हैं, प्राइवेट स्कूल में अध्यापक खुश हैं, तो मालिक भी खुश रहेगा। संस्थान की उन्नति में ही सबकी उन्नति है। काला धन है तो आपको भयभीत रखेगा। धर्म से कमाया हुआ धन तो आपको शक्ति देगा। भ्रष्टाचार से कमाया हुआ धन आपको व आपके व्यक्तित्व, आपके लोक व परलोक को देर-सवेर नष्ट कर देगा। धन को भोगो और कंजूस न बनकर दान करो। इस धन का सदुपयोग कर।

इस वेदमन्त्र में स्पष्ट बता दिया कि ईश्वर कैसा है, जगत कैसा है इस संसार में रहकर त्याग भाव से इसे कैसे भोगा जा सकता है और यह धन ऐश्वर्य जो है इसे कैसे उपयोग करना है। वेद भगवान ने इस मन्त्र के माध्यम से सारी अर्थ व्यवस्था, सारी आर्थिक क्रान्ति, गरीबी हटाओ का समाधान कर दिया है। घर से लेकर विश्व तक सारी प्लानिंग का रहस्य इस मन्त्र के गर्भ में छिपा है। प्रभु को पाना है और सदा-सुख की चाहत को पूरा करना है तो प्रभु के नाम के जाप का सहारा लेना होगा।

ओ३म् के ही ध्यान से और ध्यान से ही योग तक, जीवन के अन्तिम लक्ष्य तक, यह ओ३म् ही पहुँचाएगा।

**मन्त्री आर्य समाज,
माडल टाऊन, यमुनानगर
मो. 94164-46305**

मराठी के सन्त ज्ञानेश्वर के काव्य में वैदिक अवधारणा

● डॉ. चन्द्रकान्त गर्ज

महाराष्ट्र सारस्वत विश्व के महान् सन्त कवि एवं ईश्वर भक्त ज्ञानेश्वर का व्यक्तित्व सत्वशील से एवं वैदिक अवधारणाओं से भरा है। समूचे विश्व में, 'ज्ञानेश्वरी' नाम से परिचित ग्रन्थ के निर्माता सन्त कवि ज्ञानेश्वर से परिचित होने के लिए 'भक्ति' को जानना आवश्यक है क्योंकि वे सन्त थे, भक्त कवि थे।

भारत की भूमि में कहाँ कहाँ और कब-कब भक्ति के बीज विकीर्ण थे। इस सम्बन्ध में विद्वानों में काफी मतभेद है, पर सत्य यह है कि भारत में भक्ति का मूल काफी गहराई और काफी प्राचीन तक जाता है। सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं- वेद। वेद का अर्थ है ज्ञान। 'ज्ञान' यह ईश्वर की देन है। इसी ज्ञान की ओर आर्यवर्त के लोगों का ध्यान गया। वे ईश्वर के उपासक बनें। इसी ईश्वर की उपासना को 'भक्ति' कहा गया। श्री रामधारी सिंह दिनकर की मान्यता है "आर्य-इन्द्र, अग्नि, वरुण और आदित्य की प्रसन्नता के लिए 'यज्ञ' किया करते थे। उनका यज्ञ कर्म भक्ति भाव ही था। आर्य-अदृश्य पर, सत्ता की ओर उन्मुख रहते थे। प्रकृति की अनेक विभूतियों के प्रति आर्यों की श्रद्धा भरी रहती थी। 'कस्मै देवाय हविषा विधेम' (संस्कृति के चार अध्याय- ग्रन्थलेखक-श्रीरामधारी सिंह दिनकर)

भक्ति की धारा का उद्गम, साहित्य जगत् में कब हुआ? यह जानना आवश्यक है। साहित्य जगत् में भक्ति की धारा-14वीं शताब्दी में दिखलाई पड़ती है। कुछ विद्वान् भक्ति के श्रोत की गहराई में जाते हुए, दक्षिण के अलवार सन्तों तक पहुँच चुके हैं। दक्षिण में पाँचवी सदी से लेकर नौवीं सदी तक 'अलवार सन्तों' का बोलबाला था। उनका अपना एक संप्रदाय रहा। अलवार संप्रदाय। अलवार सन्त बहुधा निम्न जातियों के होते थे, उनमें शिक्षा-दीक्षा भी कम होती थी, किन्तु उनके भीतर चरित्र और हार्दिक गुणों का अद्भुत चमत्कार रहता था। ये विनीत सन्त थे। वे चारों वेदों के जानकार नहीं थे, वे इन्द्रियों को भी जीत नहीं पाए थे, उनके लिए ईश्वर-चरण-शरण के अतिरिक्त और किसी शक्ति पर विश्वास नहीं था। शरणागति, आत्म समर्पण, निष्णता से युक्त अलवार भक्ति (ईश्वर की उपासना) थी। यह सम्प्रदाय उदार था, उनमें छूआछूत की जटिलता नहीं थी। इस अलवार भक्ति के बीज वेदों में झंझर उधर बिखरे हुए थे।

'पद्मपुराण का एक श्लोक है। "उत्पन्ना द्रविडे चाहं कर्णाटे वृद्धियागता, स्थिता किंचितमात्र महाराष्ट्रे, गुर्जरे जीर्णता भता।" भक्ति कहती है- द्रविड़ देश में जन्मी, कर्नाटक में विकसित हुई, कुछ समय महाराष्ट्र में रही, गुजरात पहुँच कर मैं जीर्ण हुई। इसी से

मिलता जुगल एक दोहा है- 'भक्ति द्रविड़ अपनी, लायें रामानंद। परगट कियो कुकिर ने सपत द्वीप नौखंडे'।

हिन्दी साहित्य में, सन्त कबीर, तुलसी, जायसी, सूरदास आदि सन्तों ने भक्ति की लहर सामान्य जनों तक पहुँचाने का प्रयत्न किया। हिन्दी-साहित्य में, राम-कृष्ण आदि महापुरुषों के प्रति श्रद्धावान्त होने के कारण वे भक्त कविताएँ और ईश्वर के निर्गुण स्वरूप की अभिव्यक्ति करने वाले 'सन्त कवि' कहलाए गए। मराठी के सन्त और भक्त में अन्तर माना नहीं गया।

दक्षिणके अलवार सन्तों से अनुप्रमाणित हो, महाराष्ट्र में जनप्रिय भक्ति प्रणाली 'वारकरी सम्प्रदाय' रहा है। 'बारी' से बना शब्द 'वारकरी' का अर्थ है- विद्वान् देवता के दर्शन पाने के लिए प्रत्येक मास की एकादशी तिथि, विशेषत, आषाढ़ तथा कार्तिक मास शुक्ल पक्ष की एकादशी को 'पंढरपुर' की यात्रा करना। जो नियमित रूप से पंढरपुर की यात्रा करने वालों को 'वारकरी' कहते हैं। 12वीं सदी के सन्त श्री ज्ञानेश्वर श्री वारकरी थे। वारकरी सन्त श्री समाज के भिन्न भिन्न वर्गों से सम्बन्धित थे। वे व्यवसायिक वर्ग हैं।

श्री ज्ञानेश्वर का जन्म पुणे के नजदीक आँबदी ग्राम में शाके 1923 में हुआ। उनके पिता जी का नाम था- विठ्ठल पंत और माता जी का नाम था- रघुमाबाई। श्री ज्ञानेश्वर अपने माता-पिता की दूसरी सन्तान थी। निकृतिनाथ, ज्ञानेश्वर, सोपानदेव और सबसे छोटी थी मुक्ताबाई। विठ्ठलपंत की ये चार सन्तानें, जिस युग-समाज में जन्म लिया, उस समय का समाज बड़ा ही विलक्षण था। विठ्ठलपंत वेद, व्याकरण में निपुण थे, अतः यह निपुणता भी श्री ज्ञानेश्वर में आयी। वे भी वेदभक्त और वेद अध्यायी बने। इन चार सन्तानों के जन्म से पूर्व विठ्ठलपंत ने बनारस से श्रीपाद स्वामी से संन्यासाश्रम की दीक्षा ली थी। उन्हीं स्वामी के कहने पर, विठ्ठलपंत ने पुनः गृहस्थाश्रम में प्रवेश पाया था। उसके बाद ही इन चार सन्तानों का जन्म हुआ था। समय पर विठ्ठलपंत ने अपनी सन्तानों का 'उपनयन संस्कार' करने की ठानी थी। किन्तु उस समय का समाज इन सन्तानों के 'उपनयन-संस्कार' का विरोध करता रहा। उनका कहना था- वे उपनयन संस्कार के अधिकारी ही नहीं हैं। उपनयन-संस्कार तभी स्वीकार होगा, जब विठ्ठलपंत देहान्त प्रायश्चित के लिए तैयार हो। उस समय कोई पंडित, विद्वान् पुरोहित उपनयन-संस्कार के लिए तैयार नहीं हुए। उनको आज्ञा दी थी कि श्री क्षेत्र पैठया जाकर विठ्ठलपंत अपने प्रायश्चित का प्रमाण पथ लाए। विठ्ठलपंत कहते हैं 'मराठी में भी प्रायश्चित छेईम देह कर्वमा धासिन'। चार सन्तानें निकल पड़ी- पैठण की ओर-

शुद्धि पत्र प्राप्ति के लिए। प्रवास यात्रा में 'भगवद्गीता' के आधार पर ज्ञानेश्वर ने ज्ञानेश्वरी-ग्रन्थ की रचना दिखाना आरंभ किया। (नेवासा ग्रंथ में) हली-ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ का 'भावार्थ-दीपिका' भी कहते हैं। अपने आयु के 15 वर्ष में ही (उन्होंने) ज्ञानेश्वर ने अपने ग्रन्थ-ज्ञानेश्वरी की रचना की। उसके बाद वे पंढरपुर होते हुए अपने गाँव पहुँचे। वहाँ उन्होंने अपने पूर्वज (दादाजी) त्रयंवकपंत की समाधि के दर्शन किए।

उस समय की प्राकृत मराठी में 'गीता' ज्ञानेश्वर ने रची। यह समय सामान्यतः सात सौ वर्ष पूर्व का था। भक्तजन 'ज्ञानेश्वरी' को पंचवेद कहते हैं। सन्त कविभक्ति-बहिणबाई कहती है- "महाराष्ट्र शब्दान्त वेदाकन्ती चा अर्थ बोभिक्षा लोकांत सर्वद्रष्टा"। अर्थात् महाराष्ट्र की भाषा में वेदों के अर्थ को सर्व सामान्य जनों को समझाया। ज्ञानेश्वर का मन्तव्य था कि 'वेदों में समान संसार के लिए दूसरी भाषा नहीं है। सन्त ज्ञानेश्वर बुद्धिमान थे, वेदों के ज्ञाता थे। साथ ही भगवद्गीता के अध्येता थे। उन्होंने 'गीता' को प्राकृत मराठी में सामान्यजनों के सम्मुख रखा है। जो 'ज्ञानेश्वरी' के नाम से ख्याति प्राप्त है। सामान्य लोगों तक अपने वेदों के विचार सुनाते सुनाते आंबदी में समाधि ली। (शाके 1895 में)।

ज्ञानेश्वर पंडित थे, वे आत्मानुभावी थे। वे कवि-सन्त थे। उन्होंने 'ज्ञानेश्वरी' ग्रन्थ के माध्यम से सामान्यजनों विश्वात्मक ईश्वर के दर्शन कराए। ज्ञानेश्वर ने ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ की रचना अपनी विद्वता प्रकट करने के लिए नहीं रचा अपितु जीवन के विवेक को समझाने के लिए रचा था। इस उद्देश्य में वे सफल भी हुए। 'ज्ञानेश्वरी' यह ईश्वर दर्शन ही है। स्थायी दयानन्द ने 'ओ३म्' नाम की महत्ता दर्शाते हुए कहा है (सत्यार्थ प्रकाश) 'ओ३म्' ईश्वर का परम नाम है। ज्ञानेश्वर का भी कहना है "ऊँ नमो भगवते" "ऊँ कार बिंदूया नू न पवसि ठावो"। ज्ञानेश्वर ने अपने ग्रन्थ 'ज्ञानेश्वरी' के अ. 12 में योग की महत्ता दर्शायी है। उनके मन्तव्य का अर्थ है- "ज्ञान" ही योग है। ऊँ कार ही ईश्वर है। सब का मूल वेद है। वेद महत्व में हैं। (अध्याय-9, ज्ञानेश्वरी) बुद्धि का प्रकाश ही ईश्वर है साथ ही ज्ञानेश्वरी-अध्याय-9 श्लोक-2 सं. मामन दांडेकर)।

सन्त ज्ञानेश्वर-वेद के अगोचर ब्रह्मत्व को समझ चुके थे। तभी तो वे कहते हैं 'वेद प्रतिपादा।' वेद प्रतिवाद का विषय है- (साथ ज्ञानेश्वरी-1-1) ज्ञानेश्वर ने भक्ति और भक्त का सम्बन्ध ईश्वर से जोड़ा है। निष्काम बुद्धि से कर्म करने का श्रेय मध्ययुग में महाराष्ट्र के सन्त-भक्त कवि ज्ञानेश्वर को ही जाता है। उनका कहना था कि ज्ञानेश्वरी

कर्म-ईश्वर तक पहुँचने का एक माध्यम है। उन्होंने वेद की भावना-अद्वैत भावना-एक दार्शनिक तत्व स्वीकारा है। और इस तत्व को अपने 'ग्रंथ-ज्ञानेश्वरी' में जगह-जगह दे रखा है।

भारतीय इतिहास के मध्ययुग में धर्म-साधना में अन्याय, अत्याचार बढ़ गया था। 'विजयनगर' साम्राज्य का अन्त हो चुका था। तब सन्त ज्ञानेश्वर ने चरित्र तत्व को बढ़ावा दिया और मुसलमान दुर्भावनाओं से सामान्य जनता को बचाया। सन्त ज्ञानेश्वर ने सामान्यजन के लिए 'मोक्ष' के दरवाजे खोल दिए। शुद्ध ज्ञान, शुद्ध उपदेश ही मोक्ष प्राप्ति के तत्व है (अध्याय-5, श्लोक-4-सार्थ ज्ञानेश्वरी)।

उनकी धारणा थी कि वेदों से बड़ा कोई ज्ञान नहीं है। साथ विश्व निर्माता वह ईश्वर ही है- वह त्रिगुणातीत है। निर्गुण और निराकार हैं। वे वेद रूपी ईश्वर को महत्व देते हैं, उसी को नमन करते हैं। वेद ही ज्ञान के रहस्य खोलते हैं (सार्थज्ञानेश्वरी, अध्याय-8-श्लोक-20)। उन्होंने अपने ग्रंथ-ज्ञानेश्वरी के छठे अध्याय में अध्यात्म तत्व का विश्लेषण किया है। जो वेद का चिन्तन है। जीवन क्षण भंगुर हैं- क्षणभंगुरता से न डरते हुए, जीवन को 'मोक्ष' का मार्ग दिखा सकते हैं। ऐसी उनकी वैदिक अवधारणा थी। सर्व सिद्धि प्राप्त करने का उपाय एक ही है- वह है वैदिक ज्ञान। वैदिक ज्ञान की प्राप्ति जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।

ज्ञानेश्वर मत है कि भारतीय दर्शन के मूर्त है "उपनिषद् (ज्ञानेश्वरी पृ. 73 के उपनिषद् की तरह अनेक शास्त्रों के अध्येता थे। (सार्थ ज्ञानेश्वरी पृ. 108-110)। आत्मा शरीर से अलग है। जब तक आत्मा का निवास शरीर में होता है- जब तक शरीर जीवन्त रहता है- आत्मा के शरीर से निकलेती ही शरीर मृत होता है। सार्थ ज्ञानेश्वरी-15-10-99) - यह गीता का तत्वज्ञान ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ के द्वारा सन्त ज्ञानेश्वर ने दिया है।

मंगल परमात्मा का ध्यान-अच्छे कर्म करने के साथ सामान्य व्यक्ति भी करता है। ज्ञानेश्वर ने अपने ग्रन्थ के (हम ग्रंथ के प्रारंभ में) 'ओ३म्' परमेश्वर का मांगलिक नाम है यह दर्शाते हैं। उन्होंने अपने ग्रंथ के प्रथम छः अध्यायों में कर्मकाण्ड पर, उसके बाद के काण्ड में उपासना खण्ड और अन्तिम अध्याय में ज्ञानकाण्ड की महत्ता बताई है। ज्ञानेश्वर के दिए गीता चमत्कार की खान महसूस होती थी या विचार रूपी वृक्ष का बगीचा। वे सामान्य समाज के व्यक्ति को 'सर्वशक्तिमान् ईश्वर' के अर्थ को समझाते हैं। उनकी दृष्टि में ईश्वर ही पुरुष हैं।

अच्छा लगता है

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

भो र हुई, नींद खुली, प्रातः के चार बजे। सहज स्वभाववश, प्रस्फुटित हुई प्रणव ध्वनि—‘ओ३म्’। ब्राह्म मुहूर्त, सात्विक मन, प्रातःकालीन वैदिक मंत्रों का उच्चारण—‘प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे.....’ अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरुण, अश्विन, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम, रुद्र आदि विभिन्न रूपों में ईश्वर का स्मरण तथा वन्दना। एक सत्ता—अनेक नाम, अनेक गुण, इतनी महान सत्ता कि नामों में नहीं समा पाती। प्रत्येक नाम सार्थक, वह सत्ता आगे बढ़ने का संदेश दे तो अग्नि, ऐश्वर्यवाद होने की बात कहे तो इन्द्र, वरणीय बन जाए तो वरुण और प्राणिमात्र का पोषण करे तो पूषा। आत्मा जब उस परम सत्ता से जुड़ जाती है तो गौरवान्वित हो जाती है। इस प्रकार का आत्मा-परमात्मा विषयक चिन्तन—अनुभव—अच्छा लगता है।

ईश्वर का सामीप्य, निकटतम सम्पर्क, वह पिता तो हम पुत्र। पुत्र हैं तो माँगने में हिचक क्यों? फिर हम माँग ही बैठे, क्या माँगा? प्रातः कालीन प्रार्थना के अन्तिम मंत्र में पुकार ही उठें, ‘भग एव भगवान् अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम’ अर्थात् हे भगवान्! आपके पास भग ऐश्वर्य है इसलिए आप ‘भगवान्’ कहलाते हैं। पिता भगवान् हो और पुत्र भाग्यहीन

हो। यह तो उचित नहीं। अतः पुत्र के रूप में भक्त पिता के रूप में भगवान् को सम्बोधित करते हुए कहता है—‘वयं भगवन्तः स्याम’ अर्थात् हम को भी भगवान् बना दो। पर आप चिन्तित न हों, आपकी सत्ता नहीं माँग रहे हैं, हम आपके अधिकार भी नहीं चाहते। हमें तो अपने वे गुण दे दीजिए जिनके कारण आप भगवान् कहलाते हैं। जैसे दया, करुणा, ममता, परोपकार, न्यायप्रियता, दयालुता आदि। जब इन्हीं गुणों के आधार पर रामचन्द्र, कृष्णचन्द्र, महात्मा बुद्ध, महावीर, दयानन्द सरस्वती आदि को आप भगवान् बना सकते हैं तो हम पर वह कृपा दृष्टि क्यों नहीं? इस प्रकार की प्रार्थना करना, मन के अनुरूप माँगना, अनुनय—विनय करना मुझ जैसे भक्त को तो अच्छा लगता है।

आर्य समाज का वार्षिक चुनाव, गहमागहमी, भागदौड़ी और चिन्तित चेहरे। चुनाव से पूर्व हवन, प्रवचन, संगठन सूक्त का पाठ—‘संगच्छ्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्’ अर्थात् सब साथ-साथ चलें, साथ-साथ बोलें, सबके मन एक जैसे हों।

एक छोट सा अन्तराल। अब मंत्री जी की घोषणा। अब नए वर्ष के लिए पदाधिकारियों का चुनाव होगा। सबसे पहले प्रधान पद का चुनाव। पद एक पर प्रत्याशी

चार। यहीं से होती है मन की शान्ति भंग, विभाजक रेखा की शुरुआत, मुकदमे की तैयारी, वेद वाणी के संदेश भुला देने की बात। सिद्धान्त गौण—पद प्रमुख। इससे पहले कि चुनाव प्रक्रिया शुरू हो, एक स्वामी जी खड़े हो जाते हैं। सब चौंक कर शान्त हो जाते हैं। स्वामी जी फरमाते हैं, “माताओ और आर्य सज्जनों! अभी—अभी आप लोगों ने वेद मंत्र के माध्यम से प्रार्थना की कि हम सब साथ-साथ मिलकर चलें, हमारे मन एक जैसे हों। कथनी इतनी सुन्दर और करनी भेद डालने वाली। अभी इस चुनाव के बाद आर्य समाज दो दलों में बँट जाएगा। प्रार्थना, तर्क—वितर्क का रूप ले लेगी। मंत्रोच्चारण में झुकी हुई आँखें आग उगलने लगेंगी। आर्य सदस्य आर्य समाज मंदिर में न आकर कोर्ट—कचहरियों के चक्कर काटने लगेंगे। उन्मुक्त भाव से जो सुख प्रचार—प्रसार में है वह पद में कहाँ? पद के पीछे वे लोग भागते हैं जो अहंकार की तृप्ति करना चाहते हैं। क्या हममें इतना विवेक नहीं कि किसी विद्वान, विवेकशील, विनम्र, समाज हित चिन्तक तथा समर्पित व्यक्ति को निर्विरोध प्रधान बना सकें। यदि मैं गलत बोल रहा हूँ तो मुझे समझाइएँ और यदि मैं सही हूँ तो मेरी बात को स्वीकार कर लीजिए।” तभी

कई सदस्य एक साथ पुकार उठे, ‘आपका समझाना अच्छा लगता है।’

अब बात राष्ट्र की। नाम राष्ट्र सेवा का पर स्वार्थ सिद्धि। सर्वत्र भय, आतंक, हत्या, बलात्कार, मारकाट, आगजनी का बोलवाला। अब एक नया खेल भी शुरू हो गया है—पत्थर बाजी। कलम पेन्सिल पकड़ने वाले हाथों में पत्थर। सैनिकों पर पत्थर फेंको, उनकी बेइज्जती करो और भाग जाओ। यदि कोई देश प्रेमी सैनिक शहीद हो जाए तो कोई बात नहीं पर यदि किसी बिगड़ैल, बददिमाग, देशद्रोही लड़के को हल्की चोट भी लग जाए तो नारेबाजी, हड़ताल, बाजारबन्द। काश्मीर में यही सब कुछ तो हो रहा है। लोग राष्ट्र हित की दृष्टि से नहीं, पार्टी हित की दृष्टि से सोचते हैं।

यदि देश की सभी पार्टियाँ, सभी जातियाँ, सभी वर्ग निजी स्वार्थ का परित्याग करके देश के सांस्कृतिक गौरव, और राष्ट्र की एकता के लिए कटिबद्ध हो जाए तथा ‘भारत माता की जय’ ‘वन्दे मातरम्’ का जय घोष करते हुए राष्ट्र प्रेम का परिचय दें तो उनका ऐसा करना अच्छा लगता है, बहुत अच्छा लगता है।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर, हरिद्वार, (उत्तराखंड), मो. 9639149995

पृष्ठ 08 का शेष

मराठी के सन्त ज्ञानेश्वर ...

वेदती—सत्वरज और नमो गुणों से युक्त है। ‘सत्त्व’ का तत्त्व उपनिषद् का विषय रहा है। बाकि के दो तत्त्व हैं वेदों के स्वयंकेत। उन्होंने 5 प्रकार के यज्ञ की संकल्पना रखी है वे यज्ञ हैं—द्रव्य यज्ञ, तपोयज्ञ, योगयज्ञ, वाग्भूत, ज्ञानपक्ष (सार्थ ज्ञानेश्वरी पृ. 267)। वेद में यज्ञ की ये बातें हैं।

ज्ञानेश्वर की दृष्टि में—ईश्वर यह परम आनन्द का विषय है वह सर्व होने का चिन्तन है। (गीता तथा ज्ञानेश्वरी पृ. 405) ईश्वर के रहस्य को ज्ञानेश्वरी में स्थान देते हुए, उन्होंने कहा है “ईश्वर का रहस्य—परम ब्रह्म का रहस्य है। (गीता—अ.9—ज्ञानेश्वरी—5.4.73) सब में ईश्वर का निवास है (पृ. 132) सब प्रत्यक्ष का भोक्ता और स्वामी ईश्वर ही है (वही ज्ञानेश्वरी पृ. 447) ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ वैदिक अवधारणाओं के उदाहरणों से भरा पड़ा है।

ज्ञानेश्वरी—ग्रन्थ का प्रारंभ, ओ३म् (इजं) इस वैदिक अवधारणा से प्रारंभ होता है, वैदिक अवधारणा का उच्च बिन्दु—‘प्रसाददान’ इस श्लोक (अभंग) में देखा जा सकता है। ज्ञानेश्वरी की समाप्ति पर—ज्ञानेश्वर ने ‘प्रसाददान’ (प्रसावदान) लिया है। उन्हीं के शब्दों में “प्रसावदान” इस तरह है—“आता विश्वात्मके देवें। क्षेणं वाग्यज्ञे तो साबे।

तोपोनियजधावे। प्रसावदान है। जो खदार्थ व्यंरी सांडो। तथा सत्कर्म रसि वाडो। मैत्र जीवांचे। दुरिनांचे तिमिर जाओ। विश्व स्वधर्म सूर्यपाहो। जो जो वांछीह तो ते लाहो। प्राणीजात। दर्पन सकम मंनावी। ईश्वर—निष्ठाचीमांदिया की। मेटतू भूतां। कि बंधुआ सर्वसुख। पूर्ण हो अनि—तिजही लोकी। अजिजो आदि पुरुषों अंदरखंडित। यह ज्ञानेश्वर की वैश्विक प्रार्थना है। हम वैश्विक प्रार्थना करते हैं—“समूचे विश्व में (विश्वात्मक देवों) समाए हुए ईश्वर को समर्पित है यह प्रसाद (प्रसाय) यह प्रसाद ही प्रसायदान है। येणे वाग्यतृज्ञाषावे आना, उठना, बैठना, जाना—इन्हें विध्यार्थ कहने है। किस देवता को ज्ञानेश्वर—प्रार्थना करते हैं—“ऊँ नों जोड आछ। वेद प्रतिपाछ।” परमात्मा निर्गुण है। वह नित्य है, शुद्ध है, बुद्ध, युक्त, निर्गुण, निराकार है यह उनकी वैदिक धारणा है। विश्व का निर्माता ईश्वर है—उपादान कारण, और निमित्त कारण वहीं है। (गीता 7.5वां अध्याय) यज्ञ किसे कहते हैं? यज्ञ का अर्थ है समर्पण। यह वाणी का यज्ञ है—यह सवधर्म का यज्ञ है (यैणेवाम् यज्ञ तो थावे)। ज्ञानेश्वर यह कहते हैं “विश्व का प्रनादि ठावो। येथ नियंता ईश्वराओ” अर्थात्

विश्व—ईश्वर अनादि है। ज्ञानेश्वर ईश्वर से प्रसाद माँगते हैं—जे खकांची व्यंकरी साहो। अर्थात् सज्जनों का भंजन होवें, दुष्टता (कुटिलता) समाप्त हो। तथा का अर्थ है—‘उनमें’। अर्थात् दुष्टता के स्थान पर सत्कर्म करने की बुद्धि दें। और आपस में सौहार्द बढ़े। पाप का नाश हो—अर्थात् नीति का विचार न करते हुए कर्म पाप कहलाते हैं। ज्ञानेश्वर विश्वात्मक देवता से प्रार्थना करते हैं “पापी का पाप नष्ट होने दो।” सर्वत्र विजयी भवेत् यह उनकी वैदिक अवधारणा है।

हम इस शंख की ओर चलते हैं। ज्ञानेश्वर की विश्वात्मकता को दर्शाते हैं—“विश्वास अनतदि दावों। येथ नियंता ईश्वर रखो। चावडिये—यावो—अन्यावो। निबडी वेदु। वेदी अन्यायी पड़ें। तो निरय भोगे दंडे। अर्थात् विश्व यह अनादि है ‘चावडी’ का अर्थ है “कोर्ट”। मृत्यु के पहलान! यह जीवात्मा ईश्वर के दरबार में (कोर्ट) जाता है उसे अपने पाप—पुण्य का हिसाब देना होता है। ईश्वर के यहाँ अपने भाग्य का खाता है। संक्षिप्त में यह ज्ञानेश्वर की वैदिक अवधारणा है।

ज्ञानेश्वर की दृष्टि में वेद जितने महत्त्व में हैं—उससे अधिक महत्त्व है वेद में अर्थ को जानना। ज्ञानेश्वर न केवल वेद के ज्ञाता थे, वे वेद के अर्थ को जानने वाले ऋषि भी थे। उनकी दृष्टि में ईश्वर विश्व में छाया हुआ है, सर्व साक्षी है, सर्वज्ञ है, अनंतले, उसका

अस्तित्व स्वयं सिद्ध है। ईश्वर के गुणों का अंकन करना सहज नहीं है। यह ज्ञानेश्वर की सीख थी।

महाराष्ट्र में वारकरीसंप्रदाय भवन की नींव सन्त ज्ञानेश्वर ने डाली, सन्त एकनाथ ने उस पर ध्वज चढ़ाया और भवन पर कलश चढ़ाने का कार्य सन्त तुकाराम ने किया।

अतः वेद—विद्या, ज्ञान, विज्ञान के आदि श्रोत है। मानव संस्कृति के उत्साह हैं। इस ‘उत्स’ की धारा ने विश्व को पल्लवित किया। यज्ञ नहिणाबाई का कथन है कि—“आले सन्त ऋग्वेद मार्ग दाखविण्यासी ईश्वर कृपेनय। अर्थात् सन्तदक्षिणा बाई कहती है—महाराष्ट्र के सन्तों का जन्म—ऋग्वेद ये दिखाए ईश्वर प्राप्ति के लिए ही।

‘बाह्य स्पर्श सक्तात्मा विन्दत्यात्मानि यत्सुखम्।

स ब्रह्म योग युक्तात्मा सुखमसयमन्युते॥ भगवद् गीता—अ—पूवा.श्लोक 29)

(सार्थ—ज्ञानेश्वरी—अ. 5 श्लोक—27)

अर्थात् प्रिय वस्तु की प्राप्ति से सुख आनन्द नहीं मनाना चाहिए और अप्रिय वस्तु की प्राप्ति से दुःखी न होवे। ऐसी समदृष्टि जिसकी है वही मोह से दूर, स्थिरबुद्धि, ब्रह्माण्ड है। ऐसा जानो।

11 भोंसले इलाइट

भोंसलें नगर, पुणे—411007



पत्र/कविता

पाखण्ड !

जिन्दाबाद-मुर्दाबाद!!

तीन आकर्षक और अंतरमन तक पैठने वाले शब्दों "श्रद्धा, विश्वास और समर्पण" की बैसाखी पर छद्मधारी बाबाओं ने अपने अनुयायियों को "बेवकूफ, बुद्धिहीन और बेबस" बना डाला, साथ ही "समर्पण" की बाजीगरी पर भोली भाली अंधविश्वासी युवतियों-महिलाओं को ईश्वर से साक्षात् करवाने के नाम पर देह का समर्पण करवाया? उन माताओं-बहनों के भोलेपन को क्या कहा जाए जो अपने पति के होते हुए भी ऐरे-गेरे को अपना 'गुरु' बनाए और अपनी अस्मत् तक का समर्पण कर दें? बाबाओं ने पुरुष वर्ग को भी कूप-मण्डूक बनाया और 'बेड़ा पार' करवाने के प्रवचन से उन्हें अपना अंधश्रद्धालु बनाया?

कुछ शातिर श्रद्धालुओं की मिली-भगत से बाबाओं का साम्राज्य फलता-फूलता रहता है और वे ईश्वर के तथाकथित अवतार बनकर पूजे जाने लगते हैं? बाबा के अनुयायियों की संख्या लाखों के पार हो जाती है तो राजनेताओं के लिए यह टॉनिक का काम करती है जिससे वे श्रद्धा का दिखावा करके उनके चरणों में विराजते हैं, दण्डवत् प्रणाम करते हैं, सफलता का आशीर्वाद लेते हैं? इस परिदृश्य से पब्लिक गुमराह होकर उनकी चरण रज को माथे पर लगाती है और उनकी जै-जैकार में सम्मिलित होकर अपना, परिवार का, समाज और देश का अहित करती है?

भोले भक्तों की श्रद्धा ऐसी कि तिकड़मी और पहुंचे हुए (?) बाबा को

रिश्ते छोटे, खून के, भाव समझ ना पाए।

जीवन में तू चल रहा, नहीं दिशा का ज्ञान।
दशा दिशा को जानकर, मंजिल तू पहचान।।
मानुष तन साधन मिला, कर ले सद उपयोग।
मंजिल अपनी जान कर, मांग ईश सहयोग।।
ईश्वर के उपयोग की, होय सदा बरसात।
सब उतना ही पा सकें, हो जितनी औकात।।
काष्ठ से समिधा बने, अग्नि रूप हो जाय।
वैसे ही जीवन चले, तभी मंजिल को पाय।।
थोड़ी देर ही रोया, दिया नहीं उपहार।
जीवन भर रोना पड़े, मिले नहीं संस्कार।।
दीप जलाना राह में, कर देगा उजियार।
दिल मगर जलाना नहीं, कर देगा अधियार।।
जैसा दोगे और को, वैसा ही मिल जाए।
दुःख देने से तो कभी, कौन सुखी हो पाए।।
कभी शिखर पर खड़े हो, मत करना अभिमान।
छोड़ दिया सिद्धांत तो, गिरना पक्का जान।।
अपने सारे काम तो, ईश्वर खुद कर पाए।
मदद कभी मांगे नहीं, शक्तिमान कहलाए।।
रिश्ते छोटे, खून के, भाव समझ ना पाए।
रिश्ते तो वो ही बड़े, भाव समझ जो जाए।।

नरेन्द्र आहुजा विवेक

भगवान मान बैठते हैं? विश्वास भी ऐसा कि अर्द्धरात्रि को माता-पिता अपनी नाबालिग बेटियों को बाबा के पास 'झाड़ा' लगवाने एकांत कमरे में अकेले भेज देते हैं? और फिर कामुक दवा का इस्तेमाल करने वाले बाबा के आगे वह बालिका समर्पण करे तो ठीक है अन्यथा जबरदस्ती तो है ही?

वाह रे पाखण्ड, वाह री श्रद्धा, वाह रे भगवान के अवतार और वाह रे कूप-मण्डूक भक्तजन?

इस पाखण्ड को 'जिन्दाबाद' और 'मुर्दाबाद' दोनों संज्ञाएं दी जा सकती हैं? गिने-चुने बाबा लोग अब भी ठीक हैं मगर तथाकथित भगवान के अवतार बने कुकर्म बाबाओं ने "ठीक है" को भी शंका की श्रेणी में ला बैठाया? भगवान के रूप में बाबाओं को पूजने वाले व्यक्तियों को केवल मात्र इतना भर सोचने की जरूरत है कि बाबा लोग भी उन जैसे ही मानव हैं, फिर उनमें अवतारपन कहां से आ गया?

आर्यभट्ट, इन्सेट, ए.टी.एम., टी.वी., मोबाइल, नेट आदि के इस प्रगतिशील युग में बाबाओं के साथ भक्तजन भी दोषी हैं जो भीरु और नादान बने पाखण्डी बाबाओं की हर

प्रकार की करतूतों को आत्मसात करते रहते हैं? यह सब इस सदी का और विकासशील भारत का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा?

दिलचस्प ईश्वर निराकार भया फरेबी इस जगह पर आ बैठा श्रद्धालु इनके झांसे में आकर अपना अस्तित्व तक लुटा बैठा।

दिलचस्प

सेक्टर-1, ई-191

ज.ना. व्यास कालोनी

बीकानेर-334003, राजस्थान

श्री सोनालाल नेमधारी जी को बधाई और शुभकामनाएँ

कारोलिन गाँव में श्री सोनालाल नेमधारी ने सपरिवार अपने प्राँगण में भव्य रूप से गायत्री महायज्ञ का अनुष्ठान किया।

हर कार्य के पीछे कोई-न-कोई लक्ष्य छिपा रहता है। इस भव्य आयोजन के पीछे

तीन उद्देश्य रहे। श्री सोनालाल नेमधारी अस्सी साल के हुए, उनकी पत्नी जसमत नेमधारी 78 साल की हुई और साथ ही साथ वैवाहिक जीवन को 55 साल हुए।

इसी उद्देश्य को लेकर परमात्मा को धन्यवाद करने हेतु गायत्री महायज्ञ को सम्पन्न किया गया। यज्ञ पुरोहित पंडित सुमनदेव सुखनाथ और पंडिता प्रेमदा लीलकण्ठ जी थे।

यज्ञ के बाद अपनी मधुर वाणी से श्री नेमधारी ने अपनी जीवन-गाथा सुनायी। आमोरी में जन्म हुआ और उनके दादा फों-जू-साक निवासी थे। उनकी दादी भारतीय थीं। अस्सी साल की यात्रा तय करना आसान नहीं। उन्होंने कहा कि जब पीछे मुड़कर देखते हैं, तो बहुत टेढ़े-मेढ़े एवं उँचे-नीच रास्ते नज़र आते हैं।

जीवन में उन्होंने बहुत ही परिश्रम किया है, दो रुपये पगार मज़दूर का काम करते थे। विवाह के बाद कानोलिन गाँव में किराये के मकान में रहकर जीवन में आगे बढ़े। कॉलेज जाने का मौका नहीं प्राप्त हुआ। हिन्दी की पढ़ाई करके उन्होंने 30 साल अध्यापन का कार्य किया। सरकारी नौकरी के साथ-साथ बैठका में भी पढ़ाते थे और लगभग बीस साल तक पढ़ाते रहे। बैठकाओं में निरीक्षण का कार्य भी किया। समाज-सेवा में भी कभी पीछे न रहे। आज तक कारोलिन समाज के सदस्य हैं, कई साल तक प्रधान रहे और तन-मन-धन से समाज-सेवा करते रहते हैं।

श्री सोनालाल आर्योदय के लेखक भी हैं, जो सुन्दर और अच्छे-अच्छे विचार वाले लेख लिखते हैं। कहते हैं कि मेहनत का फल मीठा होता है। आज इतने परिश्रम करने के बाद उनका जीवन सुखमय है, उनकी छः सन्तानें हैं, जो अच्छा जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

अपने जीवन की गाथा सुनाते-सुनाते आँखों में आँसू आ गये। अन्त में पंडित जी ने युवकों को उदाहरण देते हुए कहा कि - 55 साल की वर्षगाँठ क्या आज के युवक और युवतियाँ निभा सकते हैं? धैर्य और जिम्मेदारी सबसे बड़ी बात है, सहनशीलता होना जरूरी है। यह सीख लेना चाहिए।

श्री सोनालाल और जसमत नेमधारी को बहुत-बहुत शुभकामनाएँ और बधाई देते हुए उनको 'जीवेम् शरदः शतम्'-सौ साल जीवित रहने का आशीर्वाद दिया गया।

प्रेमदा लीलकन्त, वाचस्पति कारोलिन, मॉरिशस

डी.ए.वी. नेष्ठा अटारी में बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ कार्यक्रम

बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ योजना के अंतर्गत 2 अक्टूबर 2017 को एक कार्यक्रम एम.के.डी.डी. ए.वी. नेष्ठा अटारी के परिसर में प्रिंसिपल परमजीत कुमार की अध्यक्षता में किया गया। जिसमें सीमावर्ती गाँवों ने हिस्सा लिया। कार्यक्रम में मुख्य मेहमान डी.ए.वी. सी.एम.सी नई दिल्ली के डायरेक्टर डॉ. जे. पी. शूर, रीजनल डायरेक्टर पंजाब जोन डॉ. नीलम कामरा जी पहुँचे। कार्यक्रम के दौरान राजस्थान से ऊँटों पर आई बी.एस. एफ. महिला अधिकारियों का एम.के.डी.डी.ए.वी. नेष्ठा अटारी के प्रांगण में पहुँचने पर भव्य स्वागत किया गया। कार्यक्रम में विद्यालय के छात्रों द्वारा 'बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ' पर एक संगीतमय नाट्य प्रस्तुत किया गया जिसे देखकर सभी मंत्रमुग्ध हो गए और करकल ध्वनि से सभी ने छात्रों का अभिनंदन किया। इस अवसर पर डॉ. जे. पी. शूर जी ने कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कहा कि भारत जैसे पुरुष प्रधान समाज में औरत को सर्वदा दूसरा स्थान ही प्राप्त



हुआ है और डी.ए.वी. मैनजिंग कमेटी भारत की बेटियों को अच्छी शिक्षा देकर उनको समाज में सम्मान दिलाने के लिए वचनबद्ध हैं। उन्होंने अपने सम्बोधन में आनंद स्वामी जी के जीवन तथा चरित्र का उल्लेख दिया और बताया कि कैसे एक अकेले व्यक्ति ने हरियाणा के एक गाँव में बेटियों की हो रही हत्या के खिलाफ जनआन्दोलन खड़ा किया जिसका परिणाम यह हुआ कि आज उसी गाँव में लड़कियों की जन्मदर लड़कों

से अधिक है। डी.ए.वी. मैनजिंग कमेटी ऐसे संतो, महात्माओं को शत-शत नमन करती है और उनके द्वारा किए गए कार्यों को आदर्श बनाकर उनके बताए मार्ग का अनुसरण करती है। उन्होंने कहा कि हम ऐसी व्यवस्था लाना चाहते हैं जिसमें भारत के सर्वोच्च प्रशासकीय पदों पर महिलाओं का पहुँचना संभव हो सके।

नारी सशक्तिकरण की सजीव उदाहरण डॉ. नीलम कामरा हैं जो कि

रीजनल डायरेक्टर पंजाब जोन के पद पर कार्यरत हैं। श्रीमती डॉ. नीलम कामरा जी ने भी बच्चियों को अपना आशीर्वाद दिया और कहा कि बेटी के शिक्षित होने का अर्थ परिवार का शिक्षित होना होता है और हम सबको बेटियों की शिक्षा की ओर आवश्यक कदम उठाने चाहिए। प्रि. परमजीत कुमार जी ने छात्रों को वहाँ उपस्थित प्रथम बी.एस.एफ. महिला कमांडर तनुश्री पार्कर से परिचित करवाया और बच्चों को उन्हें अपना आदर्श मानकर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। इस कार्यक्रम में विशेषातिथि के रूप में उपस्थित बी.एस.एफ. अटारी के कमांडिंग ऑफिसर श्री सुदीप कुमार शामिल हुए और उन्होंने महिला बी.एस.एफ. अधिकारी जो राजस्थान से चलकर भारत-पाक बार्डर पर पहुँची थी, का अभिवादन करते हुए उनके द्वारा किए गए कार्यों की सराहना की। इस अवसर पर डी.ए.वी. लोकल मैनजिंग कमेटी अटारी के मैनबर स. पलविन्दर सिंह, डॉ. राजिन्दर शर्मा (एडवोकेट) श्री विनोद कुमार दुग्गल उपस्थित थे।

डी.ए.वी. अशोक विहार में रॉकबॉल प्रतियोगिता का आयोजन

डी.ए.वी. पब्लिक सीनियर सेकेंडरी स्कूल, अशोक विहार, फेज-IV में, दिल्ली रॉकबॉल एसोसिएशन द्वारा दूसरी पुरुष एवं महिला रॉकबॉल राष्ट्रीय प्रतियोगिता का आयोजन 29 सितम्बर 2017 से 1 अक्टूबर 2017 तक किया गया। इस प्रतियोगिता का उद्घाटन पद्मभूषण, महाबली श्री सतपाल पहलवान (चेयरमैन स्कूल गेम्स फेडरेशन ऑफ इंडिया) तथा अर्जुन पुरस्कार विजेता श्री राजकुमार सांगवान के द्वारा किया गया। प्रतियोगिता में देश भर के विभिन्न राज्यों की 16 टीमों ने भाग लिया। दिल्ली रॉकबॉल एसोसिएशन के महासचिव श्री नितिन के अनुसार पुरुष वर्ग में अत्यंत रोमांचक तथा संघर्षपूर्ण मुकाबले में दिल्ली की टीम ने कर्नाटक की टीम को चार सेटों के मुकाबले में 10 अंक के अंतर से हरा कर प्रथम स्थान प्राप्त किया, वहीं हरियाणा की टीम ने बैंगलोर को चार सेटों के मुकाबले में 2 अंक के अंतर से हरा कर तीसरा स्थान प्राप्त किया। महिला वर्ग के फाइनल में



दिल्ली की टीम ने हरियाणा की टीम को चार सेटों के मुकाबले में 15 के अंतर से हराकर प्रथम स्थान प्राप्त किया। चंडीगढ़ की टीम तीसरे स्थान पर रही। एक अक्टूबर 2017 को हुए पुरस्कार वितरण समारोह में मुख्य अतिथि श्री सुरेश भंडारी (आई.ए.एस., एडिशनल कमीशनर, नार्थ एम.सी.डी.), श्री कुंवर जयसिंह

(डायरेक्टर, गृहमंत्रालय), श्री ओ.पी. मिश्रा (प्रधान-दिल्ली रॉकबॉल एसोसिएशन), श्री मनोज कुमार डबास (पूर्व ओ.एस.डी. - मुख्यमंत्री दिल्ली) श्रीमती कुसुम भारद्वाज (प्रिंसिपल- डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल), श्री गौरव देशवाल (महासचिव-रॉकबॉल अमेचर फेडरेशन ऑफ इंडिया), श्री रोहताश सिंह सोलंकी (वाइस प्रेजिडेंट,

दिल्ली रॉकबॉल एसोसिएशन), श्री भूपेंद्र सांगवान (खजांची रॉकबॉल अमेचर फेडरेशन ऑफ इंडिया) एवं सभी राज्यों से आए प्रधान एवं सचिवों के द्वारा विजयी टीमों को ट्रॉफी और मैडल प्रदान किए गए तथा सभी टीमों को भविष्य में और अच्छा करने के लिए प्रोत्साहन एवं शुभकामनाएँ दी गईं।

पृष्ठ 01 का शेष

ओ३म् ही आदि, मध्य...

श्री रविन्द्र कुमार, श्री बी.के. मित्तल, श्री अरविंद घई, श्री एम.सी. शर्मा, श्री सत्यपाल आर्य, श्री रविन्द्र तलवार, श्री महेश चोपड़ा, श्री डी.वी. सेठी, श्री एस.के. शर्मा, डा. सतीश

शर्मा, ब्रिगेडियर अदलकखा, डा. ए.के. पॉल, श्री राजन गुप्ता, प्रि. रेखा भारद्वाज, श्रीमती घई, श्रीमती शूर, श्रीमती निर्मल गुप्ता, डा. वी.पी. लखनपाल, एडवोकेट सुदर्शन कपूर,

कुँवर राजेन्द्र सिंह, प्रि. डा. राजेश कुमार, प्रि. पुष्पिंदर वालिया, प्रि. अनिता मेनन, प्रि. नीरा शर्मा, प्रि. अंजना गुप्ता, प्रि. अजय बेरी, प्रि. संजीव कोछड़, प्रि. परमजीत कुमार, प्रि. शबनम हांडा, प्रि. पी.पी. शर्मा, प्रि. विजय कुमार, प्रि. एस.पी. अरोड़ा, श्री जगदीश साहनी, श्री सुरिन्दर मेहरा, श्री

इन्द्रपाल आर्य, श्री राकेश मेहरा, श्रीमती बेदी एवं अन्य विभिन्न डी.ए.वी. कॉलेजों व स्कूलों के प्रिंसिपल व आर्य समाज संस्थाओं के माननीय सदस्य भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम का समापन शांति पाठ से हुआ। तदुपरान्त ऋषि लंगर का आयोजन किया गया।

डी.ए.वी. साहिबाबाद में बालिका स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं शिक्षा योजना का शंखनाद

आर्य युवा समाज, उत्तर प्रदेश के तत्वावधान में आर्य युवा समाज डी.ए.वी. साहिबाबाद ने आज दिनांक 16 अक्टूबर, 2017 परम पूज्य महात्मा आनंद स्वामी जी की जयंती के पुनीत अवसर पर आशा-ज्योति- 'कुहासे से किरण की ओर' कार्यक्रम के अंतर्गत बालिका स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं शिक्षा योजना का यज्ञोपासना द्वारा शुभारंभ किया जिसके अंतर्गत 5 वर्ष से 10 वर्ष तक आयु की उपेक्षित, अभावग्रस्त एवं असमर्थ बालिकाओं को शिक्षा-साक्षरता के अतिरिक्त उनका स्वास्थ्य-परीक्षण, कुपोषण से हानियाँ एवं स्वच्छता की



आवश्यकता का ज्ञान कराया जाएगा। इस अवसर पर विद्यालय की नन्हीं बालिकाओं ने कथक नृत्य की प्रस्तुति द्वारा दर्शक

दीर्घा में उपस्थित जन समूह को मंत्रमुग्ध कर दिया।

विद्यालय प्रधानाचार्य श्री वी.के.

चोपड़ा, प्रधान आर्य युवा समाज, उत्तर प्रदेश ने इस अवसर पर महात्मा आनंद स्वामी जी को स्मरणांजलि समर्पित करते हुए कहा कि महात्मा आनंद स्वामी जी नारी शिक्षा एवं सशक्तिकरण के प्रबल पक्षधर थे इस दिशा में यह हमारा एक सकारात्मक प्रयास है। उन्होंने उत्तर प्रदेश के समस्त डी.ए.वी. विद्यालयों से इस प्रकार के कार्यक्रम करने का अनुरोध किया जिससे समाज के असमर्थ-उपेक्षित वर्ग को अपने अधिकारों से वंचित न होना पड़े और समाज में सभी को समान अधिकार एवं शिक्षा प्राप्त हो सके।

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर के प्राचार्य एवं एसोसिएट प्रोफेसर सम्मानित

शिक्षक दिवस के उपलक्ष्य में रोटरी क्लब, अम्बाला ने जिला अम्बाला के लगभग 400 कॉलेज प्राचार्य, एसोसिएट प्रोफेसरों एवं स्कूली अध्यापकों को सम्मानित किया। इस उपलक्ष्य में अक्टूबर 11, 2017 को एक भव्य कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता शिक्षा मंत्री श्री राम विलास शर्मा ने की।



इस अवसर पर शिक्षक शिक्षण के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए प्राचार्य डॉ. विवेक कोहली जी को सम्मानित किया गया। कॉलेज को कुशल प्रशासन देने के साथ-साथ डॉ. कोहली समाज सुधार की गतिविधियों में भी संलग्न रहते हैं। प्राचार्य

कोहली के अतिरिक्त कॉलेज के एसोसिएट प्रो. डॉ. सुषमा गुप्ता, डॉ. रेनू अरोड़ा, डॉ. नरेन्द्र कौशिक, डॉ. नरेन्द्र कौशिक, डॉ. नीलम लूथरा तथा डॉ. सतनाम कौर को भी शिक्षक शिक्षण में अपनी विशेष सेवाएं प्रदान

करने के लिए प्रशस्ति पत्र दिया गया।

उल्लेखनीय है कि सोहन लाल डी. ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर उत्तर भारत के सर्वश्रेष्ठ कॉलेजों में से एक है। जिसकी उपलब्धियों को नैक

आदि संस्थाओं ने भी सर्वश्रेष्ठ रैंक प्रदान किया है। डी.ए.वी. प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली द्वारा संचालिता इस शिक्षण संस्थान ने हजारों स्कूल शिक्षण एवं कॉलेजों के प्राध्यापक समाज को दिए हैं।

पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य) दिल्ली में महिलाओं की सुरक्षा पर कार्यक्रम आयोजित

घरेलू हिंसा और महिलाओं के साथ अत्याचार भारत की प्रगति और कीर्ति में अभिशाप की तरह हैं। ये शब्द दिल्ली विश्वविद्यालय के पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य) के विमेन डेवलपमेंट सेल द्वारा घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा विषय पर आयोजित कार्यक्रम में सुप्रीम कोर्ट की वरिष्ठ अधिवक्ता मोनिका अरोड़ा ने कहे। उन्होंने माना कि यत्र नार्यस्तुपूज्यन्ते, रमन्तेतत्रदेवता की पहचान रखने वाले इस देश में स्त्री हमेशा वंदनीय मानी गई है। लेकिन आज हमारे यहाँ लड़की का जन्म लेना ही एक चुनौती है और अगर जन्म हो भी गया तो मुस्कुराना, पढ़ना और समाज में अपनी पहचान बनाना उससे भी बड़ी चुनौती है।

कार्यक्रम में मुख्य वक्ता मोनिका अरोड़ा का स्वागत करते हुए कॉलेज के प्राचार्य डॉ. रवीन्द्र कुमार गुप्ता ने कहा कि निश्चित रूप से समाज को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि घरेलू हिंसा हमारे देश में कितनी दुर्भाग्यपूर्ण है। भारतीय संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम् की संस्कृति है, ऐसे में एक भी परिवार में स्त्री चाहे वह माँ हो, बहन हो, पत्नी हो, हिंसा का कोई स्थान नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि घर, जो जहाँ प्रेम, स्नेह, वात्सल्य और सुरक्षा का प्रतीक है वहाँ पर हिंसा कितनी दुर्भाग्यपूर्ण है।

'सेल' की संयोजिका डॉ. रुक्मिणी ने सेल की उद्देश्यों पर बात करते हुए बताया कि कॉलेज की छात्राओं को शारीरिक और

मानसिक रूप से इतना सशक्त बनाना कि वे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तर पर देश का नेतृत्व कर सकें और अबला की जगह सबला के रूप में स्त्रियों की नई इबारत लिख सकें।

इस कार्यक्रम में सेल के अन्य

सदस्यों सोनिका नागपाल, केसांग भूटिया, श्रुतिमिश्रा, डिम्पलगुप्ता के साथ-साथ कॉलेज के कई वरिष्ठ शिक्षक व विद्यार्थी सम्मिलित हुए। अंत में कंसांग भूटिया ने उपस्थित सभी लोगों का धन्यवाद किया।

